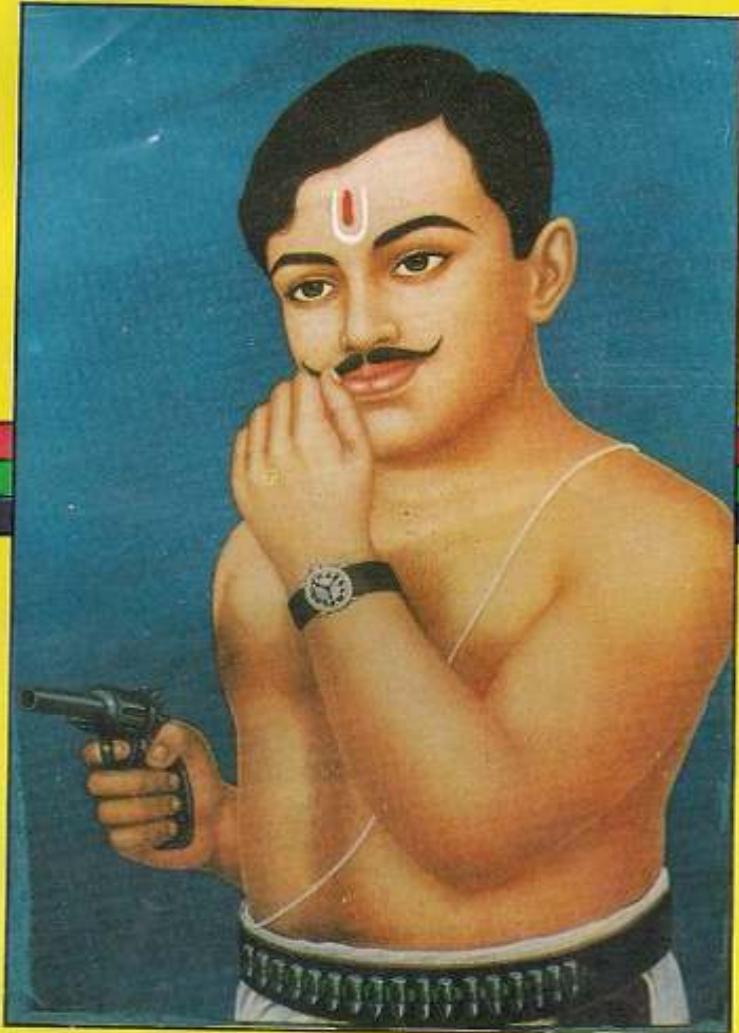


आजादयन्दशेखरचरितम्

(खण्डकाव्यम्)



प्रणेता
स्वामी रामभद्राचार्यः



सर्वान्नाय श्रीतुलसीपीठाधीश्वर श्रीपञ्जगद्गुरु
रामानन्दाचार्य अनन्तश्रीसमलइकृत १००८ वाचस्पति
स्वामी श्रीरामभद्राचार्यः

॥ श्री रामयो विजयतेराम् ॥

चित्रकूटस्थ सर्वाम्नाय श्रीतुलसीपीठाधीश्वर जगदगुरु श्री रामानन्दाचार्य
श्री रामभद्राचार्य महाराज (काव्यनाम-गिरिधरः) प्रणीतम्

“आजादचन्द्रशेखरचरितम्”

पर्वार्धः

मंगलाचरणम्

निसर्गनीलोत्पलमञ्जुलच्छवि-
भवाचितो भवतसरोजभास्करः ।
कृतान्तरूपो द्विषतां सह श्रिया,
स राघवो नो भगवान् सदावतु ॥१॥

शिवा टीका

रचयित्री—कु० गीता देवी

सीतापति रामभथो गुहङ्च मङ्ग्लां गिरं गां प्रणिपत्य भवत्या ।
आजादकाव्यस्थ तनोति टीकां गीता विजीता च शिवाभिधानाम् ॥

शिवा-अन्वयः—निसर्गनीलोत्पलमञ्जुलच्छविः भवाचितः भवतसरोज-
भास्करः द्विषतां कृतान्तरूपः श्रिया सह (वर्तमानः) सः भगवान् राघवः
नः सदा अवतु ।

भावार्थ—मुकुवि जगदगुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्री रामभद्राचार्य,
आजाद चन्द्रशेखर चरितकाव्य का मंगलाचरण प्रस्तुत करते हुए भगवान्
राघव को स्मरणपूर्वक उनसे अपनी रक्षा के लिये अभ्यर्थना करते हैं ।

जो स्वभावतः नीलवर्णं तथा कमल के समान मनोहर शोभा से
सम्पन्न हैं एवं जो भगवान् शंकर द्वारा पूजित हैं, जो भवतस्प कमलकुल
को विकसित करने के लिये सूर्यरूप तथा शत्रुओं के लिए महाकालरूप
हैं श्री सीताजी के साथ विराजमान वे भगवान् राघव हम लोगों की
निरन्तर रक्षा करें ।

शुभाशंसनम्

शिवजी उपाध्यायः

सं० सं० वि० वि० वाराणसी

आचार्यो रामभद्रः तुललितकविताकल्पनाकल्पशाखि-
सख्यप्रख्यातसीख्यः समुद्रिततुलसीपीठमुख्याधिपत्यः ।
काव्योल्लासप्रकाशप्रसरणविकसत्पुण्यपूञ्जप्रसूत-
प्रज्ञानोद्भासमानोऽधिजगति जयति ज्योतिरह्योतितास्यः ॥१॥
स्वातन्त्र्योदभवदुप्रसंगरभुवः कान्तिकतोर्धुर्धरो
राष्ट्रोद्धारकचन्द्रशेखर महाशूरो वभी सूर्यवत् ।
तत्कीर्तिश्रियमुन्निनीषुरतनोद्य रामभद्रः कृती
काव्यं नव्यमिदं विभातु भूवने तद्भूतिभास्वदविभम् ॥२॥

रामानन्दप्रथितपदवीमादध्यद् रामनाम-
प्रेत्त्वात्तीतिप्रणयनपरो रामभद्रो मनीषी ।
राष्ट्रप्रेमोद्गतसुरगिरा देशभक्तिप्रधानं
काव्यं तन्वश्वजनि जनतोन्नायको नायकोऽयम् ॥३॥

शास्त्रार्थकाव्यपरमार्थपरार्थसार्थ-
शब्दार्थसुप्रवचनार्थसमर्थनामना ।
धाम्नान्तरोदितचिरप्रतिभानरम्यः
श्रीरामभद्रकविरेष शतायुरस्तु ॥४॥

वाराणसीस्थः शिवसंज्ञकोऽयं कविः प्रियात्मीयकवेः प्रशस्तिम् ।
विद्याय सन्ध्याय मनो मनोजं यशश्चतुर्दिक्षु तवेच्छतीति ॥५॥

—०—

त्रिशूलहृच्छूलकरोद्विषच्छर-
सूजा लसम्नीलगलो जटाधरः ।
महेश्वरः शैलसुतावरो हरो,
जयत्यसौ शाश्वतचन्द्रशेषरः ॥२॥

शिवा-अन्वयः—त्रिशूलहृच्छूलकरः द्विषच्छरसूजा लसम्नीलगलः
जटाधरः महेश्वरः शैलसुतावरः हरः असौ शाश्वतचन्द्रशेषरः जयति ।

भावार्थ—इस छन्द में आचार्यवर्य ने सामिप्राय विशेषण रूप काव्यलिङ्ग अलङ्कार की भज्जिमा से प्रस्तुत काव्य के नायक आजाद चन्द्रशेषर के चरित्र की संक्षिप्त सूचना देते हुए इनके अंशो शाश्वत चन्द्रशेषर भगवान् शंकर की स्तुति की है, क्योंकि आचार्य चरणों की मान्यता के अनुसार चन्द्रशेषर आजाद भगवान् शंकर के ही अंश हैं इसका स्पष्टीकरण अग्रिम घटनाचक से हो जायेगा ।

जिन्होंने आध्यात्मिक, आधिदेविक, आधिभौतिक इन तीनों तापों का अपहरण करने वाले त्रिशूल को अपने कर कमलों में स्वीकारा है तथा शत्रुओं के शिरों की माला अथवा नरमुण्डमाल से जिनका नीलकण्ठ सुशोभित हो रहा है के ही जटाधारी महेश्वर, हिमाचलराजकन्या श्री पार्वती के पति, जन्ममृत्यु के भय को हरने वाले, अविनाशी चन्द्रमीलि भगवान् शंकर सर्वोत्कृष्टतया विराजमान हो रहे हैं ।

टिप्पणी—त्रिशूलहृच्छूलकरः श्रोणि आध्यात्मिकाधिदेविकाधि-
भौतिकानि शूलानि तापानि हरतीति त्रिशूलहृत् तादृशं शूलं करे यस्य
तथाभूतः ।

नवाम्बुदाभं तरुणाद्वजलोचनं धृतेषुचापं शुचिपोतवाससम् ।
प्रपञ्चपालं जनकात्मजापर्ति नमामि रामं दशकन्धरद्विषम् ॥३॥

शिवा-अन्वयः—नवाम्बुदाभम् तरुणाद्वजलोचनम् धृतेषुचापम्
शुचिपोतवाससम् प्रपञ्चपालम् जनकात्मजापर्तिम् दशकन्धरद्विषम् रामं
नमामि ।

भावार्थ—नवीन बादल के समान आभा वाले तथा नवीन कमल के समान नेत्र वाले, जिन्होंने धनुष और बाण धारण कर रखा है एवं जिनके कटिटट पर पवित्र पीताम्बर सुशोभित हो रहा है उन्हीं शरणागतों के पालक जनकनन्दिनी थीं सीता जी के पति, रावण के शत्रु परब्रह्म मयदिपुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम को मैं नमस्कार करता हूँ ।

भवोऽपि तस्येव सुखावहः सतां यशस्तदीयं कविभिः प्रगीयते ।
स्वमातृभूमेश्चरणाऽब्रुजाच्चन्त स्वसुप्रसूनैः कुरुते स वै पुमान् ॥४॥
शिवा-अन्वयः—तस्य एव भवः सताम् सुखावहः अपि तदीयम् यशः
कविभिः प्रगीयते, सः पुमान् वै (यः) स्वसुप्रसूनैः स्वमातृभूमेः चरणाम्बु-
जाच्चन्तम् कुरुते ।

भावार्थ—उसी महापुरुष का जन्म सज्जनों के लिए मुख्यप्रद होता है तथा उसी का यश कवियों द्वारा गाया जाता है और वास्तव में वही पुरुष पुरुषायैचतुष्टय सम्पन्न है जो अपने प्राणरूप सुन्दर पुरुषों द्वारा अपनी मातृभूमि के चरणकमल का पूजन करता है ।

यहाँ 'करोति' के स्थान पर 'कुरुते' इस आत्मनेपदी किया का प्रयोग करके ग्रन्थकार यह कहना चाहते हैं कि मातृभूमि की सेवा में निष्ठकाम भावना एवं स्वान्तः सुख अपेक्षित है इसीलिए कर्तृगामी कियाकल के अनुरोध से यहाँ आत्मनेपद का प्रयोग हुआ है, क्योंकि मातृभूमि के पूजन का फलरूप आनन्द पूजन करने वाले के लिये ही इष्ट है ।

अनल्पपापा वव जडामतिर्मम, चरित्रमीड्यं वव च चान्द्रशेषरम् ।
मूरेन्द्रभागेषु शशायितस्य मे विमर्श्यतमेष दुर्धर्ष्यतिक्रमः ॥५॥

शिवा-अन्वयः—वव अनल्पपापा मम जडा मतिः वव च ईद्यम्
चान्द्रशेषरम् चरित्रम्, मूरेन्द्रभागेषु शशायितस्य मे एषः व्यतिक्रमः वृधैः
विमर्श्यताम् ।

भावार्थ—कहाँ अनन्त पापों से युद्ध मेरी यह जड़बृद्धि और कहाँ अत्यन्त प्रशस्त आजाद चन्द्रशेषर का चरित्र । सिंह के भाग की इच्छा करने वाले खरगोश की समानता करने वाले मुझ जैसे अत्पत्ति कवि का यह व्यतिक्रम विद्वानों के द्वारा क्षमा किया जाये ।

टिप्पणी—मूरेन्द्रस्य भागः मूरेन्द्रभागः तस्य ईसोः शशायितस्य
तस्य मूरेन्द्रभागेषु शशायितस्य ।

उन्नावनामवरमण्डलमध्यवर्ती,
सन्मानुषः सततधर्मरतः सुशीलैः ।
जूष्टः कृष्णवलमहीसुरदेशभवते—
ग्रामिः शुभो बदरकास्पदमालिभति ॥६॥

शिवा-अन्वयः—उन्नावनामवरमण्डलमध्यवर्ती सन्मानुषः सततधर्मरतः

सुशीले: कृषीवलमहोसुरदेशभक्ते: ज्येष्ठः शुभः श्रामः बदरका आस्पदम् आविभवति ।

भावार्थः—श्रेष्ठ मनुष्यों से युक्त तथा निरन्तर अपने धर्म में तत्पर रहने वाले सदाचरणशील कृष्यकों, ब्राह्मणों एवं देश भक्तों से सेवित उन्नाव नामक श्रेष्ठ जनपद के मध्य विराजमान 'बदरका' नाम को धारण करने वाला एक परमकल्याणमय ग्राम है ।

टिप्पणी—उन्नाव जनपद लखनऊ और कानपुर के बीच स्थित है और उसी जनपद के अन्तर्गत कानपुर से उन्नाव जाने वाले राजमार्ग पर ही चन्द्रशेखर आजाद की जन्मभूमि बदरका गांव आज भी राष्ट्रभक्ति का प्रतीक बना हुआ भारत का गौरव बढ़ा रहा है ।

तत्रैव भूमुरकुले जलधी शशीव,
शुद्धो व्रतेन कनकञ्च हविर्भुजेव ।
दीप्तः सहस्रकिरणस्तपसेव सीता-
रामाभिधो हिजवरः समभूत त्रिपाठी ॥७॥

शिवा-अन्वयः—तत्र एव हविर्भूजा कतकम् इव व्रतेन शुद्धः च सहस्रकिरणः इव तपसा दीप्तः द्विजवरः सीतारामाभिधः त्रिपाठी जलधी शशी इव भूमुरकुले समभूत् ।

भावार्थ—उसी बदरका ग्राम में ही अग्नि के द्वारा सुवर्ण के समान व्रत से शुद्ध, सूर्य नारायण के समान लोकोत्तर तपस्या से प्रकाशमान, ब्राह्मण श्रेष्ठ स्वनामधन्य श्रीसीताराम त्रिपाठी क्षीरसागर में चन्द्रमा की भाँति एक संभ्रान्त ब्राह्मणकुल में उत्पन्न हुए ।

तं चन्द्रशेखर पितेति विभाव्य धाता,
तुल्यं स्वकेन हृदि दिव्यगुणरूपेतम् ।
थीर व्यरीरचदवध्ममति श्रुतिज्ञम्,
देशोन्नयाय रजसा परिवर्जितञ्च ॥८॥

शिवा-अन्वयः—धाता दिव्यगुणः उपेतम् धीरम् अद्भ्रमतिम् श्रुतिज्ञम् तम् चन्द्रशेखरपिता इति हृदि विभाव्य स्वकेन तुल्यम् च देशोन्नयाय रजसा परिवर्जितम् व्यरीरचत् ।

भावार्थ—ब्रह्मा जी ने मानो निर्दोष बुद्धि से सम्पन्न परम धैर्य-शासी एवं सकल शास्त्रों के मर्मज्ञ उन श्रीसीताराम त्रिपाठी को यही

आजाद चन्द्रशेखर के पिता होंगे इस प्रकार हृदय में विचार कर स्वयं भी चन्द्रशेखर शिव के पिता होने के कारण इन्हें अपने ही समान बनाया किन्तु देश की उन्नति के लिये इनमें अपने जैसा रजोगुण नहीं रखा ।

टिप्पणी—(१) चकार इवार्थः ।

(२) अहमाभी को रजोमूर्ति कहा जाता है "सदानन्दो रजोमूर्तिः" इत्यमरः ब्रह्माभी ने विचार किया कि मेरे ही समान इस ब्राह्मण द्वारा भी चन्द्रशेखर की उन्नति होगी अतः इसको मेरे ही समान होना चाहिये । पर मुझ जैसा रजोगुणी होना इसके लिये देशोन्नति में बाधक सम्भव हो सकता है क्योंकि रजोगुण का परिणाम है तमोगुण, जबकि इस समय तमोगुणमयी सन्तान की आवश्यकता नहीं है ।

नित्यं स्वधर्मनिरतः शशीलचित्तो,
वित्तैषणानिखिलदोषविवर्जितात्मा ।
श्रीमन्मुकुन्दचरणाम्बुजञ्चरीको,
वेदार्थपावितमतिविधिवद् विरेजे ॥९॥

शिवा-अन्वयः—(सः सीताराम त्रिपाठी) नित्यम् स्वधर्मनिरतः शशीलचित्तः वित्तैषणानिखिलदोषविवर्जितात्मा श्रीमन्मुकुन्दचरणाम्बुजञ्चरीकः वेदार्थपावितमतिविधिवद् विरेजे ।

भावार्थ—वे सीताराम त्रिपाठी निरन्तर अपने वर्णात्मानुकूल वैदिक धर्म के पालन में तत्पर थे उनका चित्त शम एवं शील आदि दिव्यगुणों से युक्त था उनके भनको वित्तैषणा एवं अन्य सांसारिक दोष छू भी नहीं पाये थे इस प्रकार भगवान् मुकुन्द श्रीराम के चरण कमल के भ्रमर बनकर वेदार्थभूत रामायण के अनुशीलन से अपनी बुद्धि को पवित्र करके वे साथात् ब्रह्मा के समान विराजते थे ।

टिप्पणी—वेदार्थपावितमतिः अर्थात् वेदार्थः रामायणम् "वेदः प्राचेतसादासीत्" इति बुद्धोवते; तेन वेदार्थेन रामायणेन पाविता मतिः यस्य तत्त्वाभूतः ।

साज्ञाज्यवादिरिपुमत्त गजेन्द्रासिंहं,
क्रान्तिप्रियं शुचिसुतं समवाप्तुकरमः ।
अङ्गीचकार गुणरूपवतो विद्यात्रीं,
पत्नीं यथा जलजमूर्जगरानिनाम्नीम् ॥१०॥

शिवा-अन्वयः—(सः सीताराम त्रिपाठी) जलजमूर्ज यथा विद्यात्रीं

(५)

(तथैव) साम्राज्यवादिरिपुमत्तगजेन्द्रसिंहम् ज्ञानितिप्रियम् शुचिसुतम् समवाप्तुकामः गुणहृतवतीम् जगरानिनाम्नीम् पत्नीम् अन्तीचकार।

भावार्थ—जिस प्रकार कमल से उत्पन्न भगवान् ब्रह्मा ने प्रजा सहित के लिये विद्याश्री को पत्नी के रूप में स्वीकारा उसी प्रकार पण्डित शीताराम त्रिपाठी ने साम्राज्यवादी अंगेज लासनस्थ मत्त गजेन्द्र के लिये सिंह के समान क्रान्तिप्रिय पवित्र पुत्र को प्राप्त करने की इच्छा से जगरानी नामक धर्मपत्नी को स्वीकार किया।

सा सुन्दरी धर्मंरता सुशीला,
पतिव्रतारत्नममन्द शोभा ।
उदारकीर्ति तमवाप्य कान्तं,
रेमे रवि प्राप्य सरोजिनीव ॥११॥

शिवा-अन्वयः—धर्मंरता सुशीला पतिव्रतारत्नम् अमन्द शोभा सा सुन्दरी उदारकीर्तिम् तम् कान्तम् अवाप्य रविम् प्राप्य सरोजिनी इव रेमे।

भावार्थ—सतीधर्म में परायण एवं सूचीन तथा पतिव्रताओं में रत्नस्त्रहृष्ट अत्यन्त शोभा सम्बन्ध वे सुन्दरी जगरानी देवी उदारकीर्ति द्वाले श्रीसीताराम त्रिपाठी जैसे पति को प्राप्त कर उसी प्रकार सानन्द रमण करने लगीं जैसे सूर्य नारायण को प्राप्तकर कमलिनी विकसित हो जाती है।

अशेषदोषैरनुपेतचित्ती,
श्रुतेविश्वद्वात्कुपथाद्विष्ठो ।
गाहंस्त्वयधर्मं निरती दिवेव,
कोको मुखेनैव विजह्नुस्ती ॥१२॥

शिवा-अन्वयः—अशेषदोषैः अनुपेतचित्ती श्रुतेः विश्वद्वात् कुपथात् दविष्ठो गाहंस्त्वयधर्मं निरती तो (दम्पती) दिवा कोकी इव सुखेन एव विजह्नुतुः।

(१) टिष्ठणी—कुराधात् इति छन्दसः प्रयोगः। ग्रन्थनाम्यकर्म छन्दोमयत्वात्।

भावार्थ—सम्पूर्ण दोषों हारा जिनके चितका कभी स्पर्श भी नहीं किया गया ऐसे वेदविश्वद्वात् कुमार्ग से सर्वथा दूर रहने वाले गृहस्थ धर्म के पालन में तत्पर वे आह्मण दम्पति, दिन में चक्रवाक जोड़ की भाँति अत्यन्त गुरुसे विहार करने लगे।

अथामुरे: पापोपशाचवश्वै,
गौरास्पदैवेदनिषिद्धमार्गः ।
दुरासदैश्चण्डभुजप्रताप,
संत्रयतभूमण्डलभूमिपालैः ॥१३॥
कलिप्रभावात् कलहप्रसक्तान्,
दीर्घायितो विस्मृतधर्मनीतीतैऽ ।
विहन्धतोऽन्योन्यमसहित्वान्,
स्वार्थान्धितान् कामवशान् विमूढान् ॥१४॥
निरोद्धय वै भारतवर्षभूपान्,
व्यापारिवेशेन समेत्य चात्र ॥
साम्राज्यवादापरनामधेयम्,
हा हन्त जालं विततं दुरन्तम् ॥१५॥

शिवा-अन्वयः—श्लोकव्यमेकान्वयी—वथ पापपिण्डाचवश्वैः असुरैः वेद-निषिद्धमार्गैः दुरासदैः चण्डभुजप्रतापसन्त्रस्तभूमण्डलभूमिपालैः गौरास्पदैः, कलिप्रभावात् कलहप्रसक्तान् दुर्भायितः विस्मृतधर्मनीतीतैऽ अन्योन्यम् विहन्धतः असदविचारान् स्वार्थान्धितान् कामवशान् विमूढान् वै भारतवर्षभूपान् निरोद्धय व्यापारिवेशेन समेत्य साम्राज्यवादापरनामधेयम् दुरन्तम् जालम् अज विततम् वै हा हन्त ।

यहीं तीन श्लोकों का एक ही अन्वयार्थ है।

भावार्थ—इसके अनन्तर पापहृष्टपिण्डाच के वशीभूत, आसुरी-प्रबृत्ति वाले, वेद से निषिद्ध मार्ग पर चलने वाले, किसी के भी हारा जिनका प्रधर्यण असम्भव है ऐसे अत्यन्त शक्तिशाली एवं अपनी प्रचण्ड भुजाओं के प्रताप से भूमण्डल के सभी राजा महाराजाओं को भयभीत करने वाले अंगेजों द्वारा, कलि के प्रभाव से निरर्थक अंगड़ों में फैसे हुए दुर्भायितात् वैशिक धर्म तथा राजनीति को भूलकर एक दूसरे का विरोध करते हुए निमनस्तरीय विचारों से युक्त स्वार्थ से अंगे एवं भोगविलास में पड़कर अत्यन्त मूढ़ भूतस्थिति का प्राप्त भारतीय राजाओं को देखकर (ईस्ट इण्डिया कम्पनी के बहाने) व्यापारियों के बेश में आकर इस भारतवर्ष में एक ऐसा कठिन जाल बिछाया गया जिसका दूसरा नाम साम्राज्यवाद भी था। हाय ! यहीं विद्याता की विडम्बना थी।

टिष्ठणी—पापपिण्डाचवश्वैः (श्लोक संख्या १३) पापमेवपिण्डाचः

पापपिण्डाचः तस्य वश्यः वणीभूतैः इति भावः । चण्डभुजप्रताप—चण्डानां भयंकराणां भुजानां प्रतापेन सन्त्रस्ताः भूमण्डलस्य भूमिपालाः शासकाः यैस्ते तथाभूतैः । (१३)

कपोततुल्यान् खलु भारतीयान्,
इदं निबद्धान् कणलोभयुक्तान् ।
विलोक्य हा भूमिमां नृशंसा-
स्ते व्याधकल्पा विषमं शशासुः ॥१६॥

शिवा-अन्वयः—हा कणलोभयुक्तान् [तस्मिन् जाले] इदं निबद्धान् कपोततुल्यान् भारतीयान् विलोक्य व्याधकल्पा ते गौरा: इमां भूमि विषमं शशासुः ।

भावार्थ—अहो खेद है कि कबूतरों की भाँति कण के लोभ से लोलुप तथा उसी तुच्छ स्वार्थ के लिये सांचाज्यवादरूप जाल में बैधे हुए भारतीय राजाओं को देखकर बहेलियों की भाँति इन अंग्रेजों ने इस भारतभूमि पर अत्यन्त विषम पद्धति से शासन किया । तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार बहेलिया जाल में कुछ दाने डाल कर कबूतरों को फँसा लेता है उसी प्रकार अंग्रेज शासन ने छोटे छोटे प्रलोभन देकर सामान्य बुद्धि वाले भारतीय राजाओं को फोड़ लिया और उनकी सहायता से बड़े बड़े किलों पर अपना अधिकार जमाया । इस प्रकार “फट डालो और राज्य करो” इस छोलरी कूटनीति से भारत का उत्पीड़न करना प्रारम्भ कर दिया ।

अचीकरन् सज्जनवृन्दहत्या-
मचूचूरन् भारतवासिधैर्यम् ।
अदीदलन् धार्मिकसुव्यवस्थाम्,
व्यरीरचन् दुस्सहशासनन्ते ॥१७॥

शिवा-अन्वयः—ते (गौराङ्गः) सज्जनवृन्दहत्याम् अचीकरन्, भारतवासिधैर्यम् अचूचूरन्, धार्मिकसुव्यवस्थाम् अदीदलन्, दुस्सहशासनम् व्यरीरचन् ।

भावार्थ—अब अंग्रेजों की शासन पद्धति कावर्णन कर रहे हैं— उन गोरों ने अनेक सज्जनवृन्दों की हत्या करवाई और भारतवासियों के धैर्य को चुरा लिया, धर्म की सुन्दर व्यवस्था को तहस नहस कर दिया और असहनीय बर्बरता पूर्ण शासन की संरचना की ।

(५)

कवचित्तपाणां निवहे विभेदं,
कवचिद्विरोधञ्च सतां समूहे ।
अन्यायपूर्णं कवचिदुग्रदण्डम्,
स्वच्छन्दमाचेरुरहो क्षपाटा: ॥१८॥

शिवा-अन्वयः—(इमे) क्षपाटा: कवचित् तृपाणाम् निवहे विभेदम् अथचित् सतां समूहे विरोधम् (जनयामासु: इति शेषः) कवचित् कवचित् अन्यायपूर्णम् उग्रदण्डम् आचेहः ।

भावार्थ—अहो इन राक्षसों ने कहीं तो राजाओं के बीच परस्पर भेद डाला और कहीं सज्जनों के समूह में विरोध उत्पन्न किया तथा कहीं अपनी इच्छा से भारतीयों का दमन करने के लिये अन्यायपूर्ण निर्भम उग्रदण्ड का प्रयोग किया ।

टिप्पणी—क्षपाटा: क्षपायां रात्रौ अटन्ति भ्राम्यन्ति इति क्षपाटा: राक्षसाः ।

अर्थात् जब भारत के भविष्य में अन्धकारमयी परस्पर विभेद की रात्रि आई तभी अंग्रेजों ने आकर शासन किया अतएव यहाँ क्षपाट शब्द अत्यन्त उपयुक्त है ।

कवचित्प्रधर्षं ललनाजनानाम्,
कवचिद्विधातं प्रियसंस्कृतीनाम् ।
दुश्शासनेनेव समस्तदेशम्,
व्याक्षोभयन् दुस्सहशासनेन ॥१९॥

शिवा-अन्वयः—कवचित् ललनाजनानाम् प्रधर्षम् कवचित् प्रिय-संस्कृतीनाम् विधातम् (कुर्वन्तः) ते दुश्शासनेन इव दुस्सहशासनेन समस्त-देशम् व्याक्षोभयन् ।

भावार्थ—कहीं पर भारतीय नारीजनों का प्रधर्षण और कहीं पर भारतीय संस्कृति के प्रेमीजनों का समूल विनाश करते हुए वे अंग्रेज शासक दुश्शासनरूप (दुर्योधन का छोटा भाई) असहनीय कठोर शासन से सम्पूर्ण देग को ही क्षुब्ध करने लगे ।

स्वान्त्र्यसूर्ये गगनान्निमन्ने,
सुभारताख्यात् किल पश्चिमाद्यौ ।
तदा वयांसीब च भारतीयाः,
सवालवृद्धा रुद्धुविषण्णाः ॥२०॥

(६)

शिवा-अन्वयः- श्रीरात्मासूयं सुभारतारुद्यात् गगनात् पश्चिमावधी
निरापौ तथा गदालवृद्धः। विष्णुः भारतीयाः वयांसि इव करुणं रुदुः।

भावार्थः- जय भारतरूप आकाश से स्वातन्त्र्यरूप सूर्यनारायण
पश्चिमी समृद्ध अर्थात् पश्चिमी सम्यता के पीषक अंगेजों के शासनचक्र
में इष्ट गैरि तथ सभी बालवृद्ध भारतवासी दुःखी होकर पश्चिमों की भाँति
सौमि चित्तलाने लगे।

सा दासतारुद्या किल भीमरूपा,
गतप्रकाशा च महोग्रसत्वा ।
गौरप्रहा भारतलोककोक,
शोकप्रदा घोरतमा निशाभूत् ॥२१॥

शिवा-अन्वयः- सा भीमरूपा च गतप्रकाशा महोग्रसत्वा गौरप्रह
दासतारुद्या घोरतमानिशा भारतलोककोकशोकप्रदा अभूत् ।

भावार्थः- वह अत्यन्त घोर रूपवाली स्वतन्त्रता के प्रकाश से रहित
अत्यन्त उग्र शासक जन्मुओं से युक्त गौराङ्ग अर्थात् अंगेज रूप ग्रहों से
भरी हुई परतन्त्रता नामक घोर अन्धकारमयी रात्रि, भारतवासी रूप
चक्रवाकों को अत्यन्त शोक देने लगी।

टिप्पणी—पूर्व के इन दोनों श्लोकों में साञ्जरूपक अलङ्कार का
प्रयोग है।

अथादिदेवेन रमेश्वरेण,
सम्प्रेरिता देशसमुन्नयाय ।
मागौ विनिश्चित्युरुभादवाप्नुम्,
हरि सुभक्ता इव सांख्ययोगौ ॥२२॥

शिवा-अन्वयः- अथ हरिम् अवाप्नुम् सुभक्ताः सांख्ययोगौ इव
आदिदेवेन रमेश्वरेण सम्प्रेरिताः (नेतारः) देशसमुन्नयाय उभौ मागौ
विनिश्चित्युः।

भावार्थः- इसके अनन्तर जिस प्रकार थ्रेष्ठ भक्त लोग भगवान् को
प्राप्त करने के लिए सांख्य और योग इन दो पढ़तियों को स्वीकारते हैं
तदृत् आदिदेव रमापति भगवान् श्रीराम के द्वारा प्रेरित होकर भारतीय
नेताओं ने देश की समुन्नति के लिए अर्थात् भारत को परतन्त्रता से मुक्त
करने के लिए शान्ति और ऋान्ति इन दो मार्गों का निश्चय किया।

(१०)

टिप्पणी—श्रीमद्भगवद् गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को
दो मार्ग बताए, शानियों के लिए सांख्य योग और कर्मयोगियों के लिए
कर्मयोग, किन्तु ये दोनों ही मार्ग उसी परमलक्ष्य परमात्मा के प्राप्तक हैं,
यथा—

यत्सांख्यः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपिगम्यते ।
एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति ॥
(गीता ५/५)

शान्तिप्रिया ज्ञानरता इवेके,
गान्धिप्रदिष्टा नेहरूप्रधानाः ।
सत्याग्रहास्त्रेण च शत्रुवृन्दैः,
सहारभन्ताजिमह्युसया च ॥२३॥

शिवा-अन्वयः- एके ज्ञानरता इव शान्तिप्रिया गान्धिप्रदिष्टा
नेहरूप्रधानाः सत्याग्रहास्त्रेण च अहिंसया शत्रुवृन्दैः सह आजिम् आर-
भन्त ।

भावार्थः- कुछ लोगों ने महात्मा गांधी के द्वारा आदेश प्राप्त कर
पिछले जवाहर लाल नेहरू को प्रधान मानकर शान्तिप्रिय सांख्ययोगियों
की भाँति सत्याग्रहरूप शस्त्र तथा अहिंसा की शक्ति से शत्रुओं के साथ
शान्तिपूर्ण युद्ध प्रारम्भ कर दिया।

गौराङ्गदुर्नीतिवृद्धरोषाः,
सिहोपमाः सत्पुरुषाश्च केचित् ।
उत्स्थितुमैचल्लन् बलिवेदिकायाम्,
देहं यथा यौगिन उज्जितेष्टाः ॥२४॥

शिवा-अन्वयः- च उज्जितेष्टाः यौगिनः यथा गौराङ्गदुर्नीतिवृद्ध-
रोषाः सिहोपमाः केचित् सत्पुरुषाः बलिवेदिकायाम् देहम् उत्स्थितुम्
ऐचल्लन् ।

भावार्थः- और जिस प्रकार कर्मयोगी समस्त कलों की इच्छाओं
को छोड़कर त्याग की भावना से कर्म में लगे रहते हैं वैसे ही अंगेजों की
दुर्नीति से जिनका श्रोध उबल चका था, ऐसे सिह के समान शैर्यसम्पन्न
कुछ महापुरुष क्रान्तिकारी संघर्ष के द्वारा अपने प्राणों का भी उत्सर्ज करने
के लिए तुल नये थे।

(११)

॥४७॥ वहाँ कानिकाल में गत्यापारी पाणिनिकारी नेताओं को मात्रपारी तथा कानिकारी महायुधी योगीयोगी कान्दकर सुरुपट्ट रूप में कानिकारी की ही तरफ भगवान् गत्याम किया है क्योंकि श्री गीता जी नहीं ॥

तपीस्तु कर्मसन्यासात् कर्मयोगो विशिष्यते ।

(गीता ५/२)

अर्थात् कर्म सन्यास की अपेक्षा कर्मयोग ही श्रेष्ठ है इस वाक्य से भगवान् ने जिस प्रकार सांख्ययोग की अपेक्षा कर्मयोग श्रेष्ठ बताया थीक वैसे ही प्रस्तुत काव्य के प्रणेता की इष्टिमें कान्ति एवं कानिकारी श्रेष्ठ हैं । क्योंकि उनके द्वारा पहले अंग्रेजों के धैर्य को हिलाया गया पश्चात् बने बनाये खेल का गांधीवादी नेताओं ने लाभ उठाया ।

स्वदेशरक्षार्थकृतप्रयाण,
ज्ञांसीश्वरी मङ्गलमुख्यकानाम् ।
गाथा निशम्योद्वत्बाहुदण्डः;
कान्ति सप्तनैः सममन्वतिष्ठन् ॥२५॥

शिवा-अन्वयः—स्वदेशरक्षार्थकृतप्रयाण ज्ञांसीश्वरी मङ्गलमुख्यकानाम् गाथा: निशम्य उद्वत्बाहुदण्डः (ते) सप्तनैः समम् कान्तिम् अन्वतिष्ठन् ।

भावार्थ—स्वदेश की रक्षा के लिए अपने प्राणों को विसर्जित करने वाली ज्ञांसी की रानी लक्ष्मीवाई तथा मङ्गलपाण्डेय आदि स्वतन्त्रता सेनानियों की गाथा सुनकर अपने फङ्कते हुए भुजदण्डों के सहारे इन कानिकारी सपूत्रों ने शत्रुओं के साथ कान्ति युद्ध प्रारम्भ कर दिया ।

कदाचिदाकर्णं विदेशसेना,
हतप्रयासान् रणधीरयोधान् ।
सवाष्पनेत्रौ हृदि दम्पती तौ,
देश विषद् व्याकुलमन्वभूताम् ॥२६॥

शिवा-अन्वयः—कदाचित् विदेशसेना हतप्रयासान् रणधीरयोधान् आकर्णं सवाष्पनेत्रौ तौ दम्पती हृदि देश विषद् व्याकुलम् अन्वभूताम् ।

भावार्थ—अब कवि इस प्रसङ्ग को मूल घटना से जोड़ने का उपक्रम करते हुए कहते हैं—

किसी समय बदरका ग्राम निवासी श्री गीताराम त्रिपाठी पूर्व जगरानी देवी ने यह दारुण समाचार सुना कि विदेशी सेना के द्वारा भारतीय कानिकारी रणधीर योद्धाओं के सभी प्रयास कुचल दिये गये हैं तब इन ब्राह्मण दम्पति के नेत्र अश्रुपूरित हो गये और इन्होंने विषति से व्याकुल भारत देश की दयनीयता का अपने करुण हृदय में अनुभव कर लिया ।

साम्राज्यवादस्य विनाशकारी,
सत्कान्तिकारी रिपुवर्पहारी ।
अस्मत्सुतः स्यादिति साभिलाषौ,
प्रीतौ गृहं शाम्भवमीयतुस्तौ ॥२७॥

शिवा-अन्वयः—साम्राज्यवादस्य विनाशकारी सत्कान्तिकारी रिपुवर्पहारी अस्मत् सुतः स्यात् इति साभिलाषौ प्रीतौ तौ शाम्भवम् गृहम् ईयतुः ।

भावार्थ—साम्राज्यवाद का विनाश करने वाला, न्यायपूर्ण कान्तिकारी, शत्रुओं के गर्व को चूर्ण करने वाला, परमप्रतापी पुत्र हमें प्राप्त हो, इस प्रकार मङ्गलमय मनोरथ करते हुए वे ब्राह्मणदम्पति प्रसन्नतापूर्वक भगवान् शंकर के मंदिर में गए ।

आचम्य मन्त्राम्बुकृताभिषेकौ,
प्राणास्तथायाम्य शिवं स्मरन्ते ।
कृताङ्जली हृष्टसुगात्रयष्टी,
तावस्तुता सादरमाशुतोषम् ॥२८॥

शिवा-अन्वयः—तौ मन्त्राम्बुकृताभिषेकौ आचम्य तथा प्राणान् आचम्य शिवं स्मरन्तौ कृताङ्जली हृष्टसुगात्रयष्टी सादरम् आशुतोषम अस्तुताम् ।

भावार्थ—वे दम्पति आचमन एवं प्राणायाम करके मन्त्रयुक्त जल से भगवान् शिव का अभिषेक करके शिवजी का स्मरण करते हुए हाथ जोड़कर परम पुलकित होकर आशुतोष भगवान् शंकर की सादर स्तुति करने लगे ।

नमस्ते रुद्राय प्रमथपतये तेऽस्तु च नमो,
नमस्ते तेजोभिश्छुरितवपुषे ध्वस्ततमसे ।
नमस्ते चन्द्रार्कज्वलननयनायेन्दुरुच्ये,
नमस्ते शर्वणी मुखज्वलमृङ्गाय सततम् ॥२९॥

शिवा-अन्वयः— गदाय ते नमः न प्रमथपतये ते नमः अस्तु, तेजोभिः
पूर्णितवृत्ते इवस्तमसे ते नमः, अद्वाराकृज्वलनयनाय इन्दुरुचये ते नमः
शर्वाणी मुखजलजभृज्जाय ते सततम् नमः ।

भावार्थ—हे रुद्र ! आपको नमस्कार हो । हे प्रमथ नामक गणों के
द्वारा भी आपको नमस्कार हो । अलौकिक तेज से देवीप्यमान शरीर वाले
एवं अविद्या रूप अन्धकार को नष्ट करने वाले आपको नमस्कार हो ।
चन्द्र, सूर्य तथा अग्नि ही जिनके नेत्र हैं तथा जो चन्द्रमा के समान शुभ्र
कान्ति से सुशोभित हैं, ऐसे आपको नमस्कार हो । शर्वाणी अर्थात् पार्वती
के मुखकमल के सौन्दर्य मकरन्द को पीने वाले भ्रमरस्वरूप शिव आपको
सदैव नमस्कार हो ।

१. टिप्पणी—वहाँ तेजोभिः का आदरार्थ में बहुवचन का प्रयोग
है ।

२. टिप्पणी—शर्वाणी मुखजलज भृज्जाय शृणाति हिनस्ति
पापिनः यः सः शर्वैः शिवः तस्य पत्नी शर्वाणी, 'इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्र-
मृद्हिभारत्यवयवनमातुलाचार्याणामातुक्' (पा० सूत्र ४।१।४६) इति
पाणिनीय सूत्र 'आतुक् सहितः छिप् प्रत्ययः' शर्वाण्या मुखम् एव जलजम्
तद भृज्जाय माधुर्यमकरन्दपापिने भ्रमराय इति भावः ।

जटावल्ली ग्रन्थि ग्रथित कलगङ्गा नववधू,
लसल्लोलद्वीच्च प्रसूतमृदुवाहुं शशिधरम् ।
स्मरन्तं श्रीरामाम्बुजचरणमदवक्तव्यपूष्यम्
प्रपन्नौ त्वा देवं शरणमशिवं शङ्कर हर ॥३०॥

शिवा-अन्वयः— जटावल्ली ग्रन्थि ग्रथित कलगङ्गा नववधू । लसत-
लोलद्वीची प्रसूतमृदुवाहु शशिधरम् श्रीरामाम्बुजचरणम् स्मरन्तम्
अव्यक्तवपुष्यम् त्वाम् देवम् शरणम् प्रपन्नौ स्वः । हे शंकर अशिवमहर ।

भावार्थ—अपनी जटा रूप नव वधू की चड्चल एवं सुशोभित लहर
रूप सुन्दर भूजाओं से सुशोभित होते हुए बालचन्द्र को धारण किये हुए
श्रीराम के श्रीचरण कमल का स्मरण करते हुए आप जैसे देवाधिदेव
महादेव की शरण में हृष प्रवन्न हैं हे कल्याणकारक शिव ! हमारे
अनुभों को हर लीजिए ।

प्रभो ! त्वं सर्वज्ञस्त्वमसि किल साक्षी तनुभूता-
मतो धार्ढ्रं य तु धर्मं निजविकलताल्यानमन्य ।

(१४)

परं क्षत्रव्यन्ती करणलपतं शौककामितम्,
विना याच्छ्यां मातुः शिशुरपि न दुष्टं हि लभते ॥३१॥

शिवा-अन्वयः—प्रभो ! त्वम् सर्वज्ञः तनुभूताम् त्वम् साक्षी धर्म
किन । हे अनंष ! अतः ते तु धर्मं निज विकलताल्यानम् धार्ढ्रं यम् परम् नो
णोषत्वनितम् करणलपतम् क्षत्रव्यम् हि जिषुः अपि याच्छ्याम् विना
मातुः तु धर्मं न लभते ।

भावार्थ—हे प्रभो ! आप सर्वज्ञ हैं और आप ही समस्त प्राणियों
के गुमाणुम कर्मों के निश्चयेन साक्षी हैं, इसलिए हे निष्पाप महादेव !
आपके समक्ष अपनी व्याकुलता का कथन धृष्टता ही है, फिर भी आप
हम ब्राह्मण दम्पति के शोकपूर्ण करण-अन्दन को भ्रमा कर दें, क्योंकि
नहीं शिशु भी जब तक रोकर अपनी याचना प्रस्तुत नहीं करता तब तक
माता से उसे स्तन्यपान भी नहीं मिलता ।

विहन्यन्ते गावो ध्रगभवनतरते श्रुतिपथः,
प्रताङ्गन्ते सन्तः प्रणिहृतविमानाश्च ललनाः ।
अधर्मव्याधूतं तव जनपदं खण्डपरशो !
वसन् कैलासे त्वं किमनवगतो भारतदशाम् ॥३२॥

शिवा-अन्वयः—हे खण्डपरशो ! गावः विहन्यन्ते ते श्रुतिपथ
भृणम् अवनतः सन्तः प्रताङ्गन्ते च ललनाः प्रणिहृतविमानाः (मवन्तीति
शेषः) तव जनपदम् अधर्मव्याधूतम् त्वम् कैलासे वसन् किम् भारतदशाम्
अनवगतः ।

भावार्थ—हे खण्डपरशो ! अर्थात् छोटे कुलहाडे का टुकड़ा धारण
करने वाले शिव ! यहाँ निरन्तर गायें काटी जा रही हैं । आपका वेद-पथ
अत्यन्त अवनत हो चुका है, नित्य ही सन्त प्रताङ्गित हो रहे हैं एवं भार-
तीय ललनाओं का विशिष्ट चरित्र एवं सम्मान लूटा जा रहा है । आपका
यह जनपद अधर्म से कंपित हो चुका है । आप कैलास जैसे उच्च शिखर
पर निवास करते हुए भी क्या भारत की दयनीय दशा से परिचित नहीं
हैं ।

न वाङ्छावः स्वर्गं वरद ! न च निर्वाणपदवीम् ।
न वा प्राज्ञं राज्ञं न च सुरपि पौरन्दरपदम् ।
न सिंदुं नो विद्या न च धनद ! वित्तं न च सुखम् ।
विमुक्तां कांडकावो हर परकराद् भारतमहीम् ॥३३॥

(१५)

शिवा-अन्वयः—हे वरद! आवाम् स्वर्गम् न वाङ्छावः च निवर्णि पदवीम् न (इच्छावः) हे सुरप ! न वा प्राज्यम् राज्यम् च पौरन्दर पदं न (कांक्षावः) न सिद्धिम् नो विद्याम् च न धनद वित्तम् च न सुखम् (अभिलाषावः) हे हर ! परकरात् विमुक्ताम् भारतमहीम् कांक्षावः ।

भावार्थ—हे वरदानी शिव ! हम न तो स्वर्ग चाहते हैं और न ही निवारण पद, हे भोले बाबा देव पालक ! हमें न तो प्राज्य अर्थात् स्वर्णादि चाहिए और न ही राज्य, हम इन्द्र पद के भी इच्छुक नहीं हैं, हम सिद्धि विद्या कुवेर जैसा धन अथवा अलौकिक सुख की भी अभिलाषा नहीं रखते । हे हर ! हम तो अब शत्रुओं के हाथ से मुक्त हुई स्वतन्त्र भारत-भूमि ही चाहते हैं ।

दिवा वा रात्रौ वा दिनपरिणतौ वायुषसि वा,
निशीथे वा मध्ये व्रजति हरिदश्वे नभसि वा ।
शये वा बोधे वा सततमरिनाशव्यसनिनः
प्रकामं वर्धन्ताम् शिव कुशल देशप्रहरिणः ॥३४॥

शिवा-अन्वयः—हे शिव ! दिवा वा रात्रौ वा दिन परिणतौ वा उपसि अपि वा निशीथे वा मध्ये नभसि हरिदश्वे व्रजति वा शये वा बोधे वा सततम् अरिनाशव्यवसनिनः अपि कुशलदेशप्रहरिणः प्रकामम् वर्धन्ताम् ।

भावार्थ—हे शिव ! चाहे दिन हो या रात, सन्ध्या हो या प्रातः-काल, अर्धरात्रि हो या मध्याह्न, शयन हो या जागरण प्रत्येक परिस्थिति में शत्रुओं का नाश ही जिनका व्यसन है, ऐसे परम जागरूक हमारे कुशल देश प्रहरी निरन्तर बढ़ते रहें ।

कृपादृष्टं सृष्टं शिव ! सकल देशे सुखमयीम्,
दिघन्तां सन्धत्तामरिषु च भवान् मार्गेणगणान् ।
समादत्तां लीला सुखपरिचितां भारतभूवम्,
निजांशेनौदास्यं त्वरितमथ दास्यं हर हर ॥३५॥

शिवा-अन्वयः—हे शिव ! भवान् सकलदेशे कृपादृष्टम् सुख-मयीम् सृष्टिम् विधत्ताम् च अरिषु मार्गेणगणान् सन्धत्ताम् लीलासुख परिचिताम् भारतभूवमनिजांशेन समादत्ताम् हे हर ! त्वरितम् औदास्यम् अथ दास्यम् हर ।

भावार्थ—हे कल्याणस्वरूप शिव ! इस देश पर कृपादृष्टि

करके सुखमयी यूटिं कीजिए और शत्रुओं पर अपने तीव्रे याण-रामूहा का सन्धान कीजिये भगवानी लीलाओं के सुख से परिचित इस भारत भूमि को अपने किसी विणिष्ट अंश से पुनः सनाथ कीजिये । हे हर ! तत्परतात् अति शीघ्र ही जनता की उदासी एवं देश की परतंत्रता को दूर कीजिए ।

जानासि नाथ ! सकलं व्यसनं जनानाम्,

गीराङ्गुरात्रिचरचारितघोरदुःखे ।

भागत्य शीघ्रमिह दिव्यकरेण देशे,

हे चन्द्रशेखर ! भरं हर भारतस्य ॥३६॥

शिवा—अन्वयः—हे नाथ ! जनानाम् सकलम् व्यसनम् जानासि । गीराङ्गुरात्रिचरचारितघोरदुःखे इह देशे शीघ्रम् आगत्य हे चन्द्रशेखर ! दिव्यकरेण भारतस्य भरम् हर ।

भावार्थ—हे नाथ आप भवतों की विषत्ति जानते हैं अतः हे चन्द्र-शेखर ! अप्रेज राक्षसों द्वारा उपस्थित किये हुए धोर दुःख से पीड़ित इस देश में शीघ्र आकर अपने दिव्य वर से भारत का भय-भार उतार कीजिए ।

इत्यं मुहुः पुलकिताङ्गुरुहो प्रणम्य,

प्रेमाश्रुभिः शिवमगोचरमिन्द्रियाणाम् ।

आसिच्य गदगदगिरा कलितप्रसादी,

संस्तुत्य भव्यभवनं ससुखं गती तौ ॥३७॥

शिवा—अन्वयः—इत्यम् इन्द्रियाणाम् अगोचरम् शिवम् गदगदगिरा संस्तुत्य प्रेमाश्रुभिः आसिच्य पुलकिताङ्गुरुहो मुहुः प्रणम्य कलितप्रसादी तौ ससुखौ भव्यभवनम् गती ।

भावार्थ—इस प्रकार समस्त इन्द्रियों के लिए अगोचर भगवान् शिव की गदगद वाणी से स्तुति करके अपनेप्रे माशुओं से उनका आदर-पूर्वक अभियक्ष करके तथा पुलकपूर्ण शरीर से भगवान् शिव को बार-बार प्रणाम करके वे ब्राह्मण दम्पति शिव जी के प्रसाद से परम सुख का अनुभव करके अपने कल्याणमय भवन को जले गये ।

काले स्वभारतदशा दयनीय दास्य,

पाश्चात्यशासन निरीक्षणलब्धखेदः ।

तदभवित भावितमनाः शशशेखरोसा,

आगन्तुमैच्छदमलेन निजांशकेन ॥३८॥

शिवा-अन्वयः—काले तद् भक्तिभावितमना: स्वभारतदशा दयनीय दास्य पाइचात्य शासन निरीक्षण लब्धेखेदः असौ शशिशेखरः अमलेन निजांशकेन आगन्तुम् ऐच्छत् ।

भावार्थः—इसके अनन्तर उचित समय पर श्री सीताराम त्रिपाठी एवं जगरानी माँ की भक्ति से प्रभावित होकर अपने भारत की दुर्दशा दयनीय परतंत्रता तथा अंगेजों के कूर शासन को देखकर अत्यन्त खिल्ह हुए स्वयं चन्द्रशेखर भगवान् शंकर ने ही अपने निर्मल सात्त्विक अंश से इस भारत भूमि पर अवतार के बहाने आने की इच्छा की ।

सा सुन्दरी सकल सदगुणरोचमाना,
सीमन्तिनी जनशिरोमणिरीह्यकीर्तिः ।
गर्भ दधी निखिलतोक्त मुदे शिवांशः,
श्री चन्द्रशेखरमरिन्द्रममहितीयम् ॥३६॥

शिवा-अन्वयः—सकल सदगुण रोचमाना सीमन्तिनी जन शिरोमणि: हृदय कीर्तिः सा सुन्दरी सकलतोक्त मुदे अहितीयम् अरिन्द्रमम् शिवांशम् श्री चन्द्रशेखरम् गर्भ दधी ।

भावार्थः—सम्पूर्ण सदगुणों से मुशोभित होती हुई नारीजनों की शिरोमणि अत्यन्त प्रसंसानीय यशवाली उन परम सुन्दरी जगरानी देवी ने समस्त संसार के कल्याण के लिये साक्षात् शिव के स्वरूप अहितीय शत्रुताशक आजाद श्री चन्द्रशेखर को गर्भ के रूप में धारण किया ।

पञ्चेन्द्रियैरपि विवर्जित पञ्चमोग,
बाहुप्रताप समर्धित पञ्चशक्तिम् ।
स्वब्रह्मचर्यं विफलीकृत पञ्चदाणं,
कालेऽध्यसूत तनयं किल पञ्चमं सा ॥४०॥

शिवा-अन्वयः—सा पञ्चेन्द्रियैरपि विवर्जितपञ्चमोगम् बाहुप्रतापसमर्धितपञ्चशक्तिम् स्वब्रह्मचर्यं विफलीकृत पञ्चदाणम् कालेऽध्यसूत ।

भावार्थः—अब ग्रन्थकार चन्द्रशेखर आजाद के जन्म के सम्बन्ध में कुछ अपनी मधुर उत्प्रेक्षाएँ प्रस्तुत कर रहे हैं—

वयोङ्कि चन्द्रशेखर अपने माता-पिता की पंचम सन्तान हैं इत्थित उनमें पञ्च संख्या की चरितार्थता भी संयोग से उपस्थित हो गई हैं पाँचों ज्ञानेन्द्रियों से जिन्होंने शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गन्ध इन पाँचों विषयों का सेवन

ही नहीं विना, जिसके भूजा वे प्रताप में पाँच लोकानां की शापित पुनर्जनी तथा जिनमें अक्षयपर्याय ने पंचवाणीधारी कागौर की श्री विकल कर दिया था ऐसे पञ्च संख्या के अर्थे रूप चन्द्रशेखर की जगतानी भी ने शान्त समय पर सन्तान के रूप में अधिकृत रूप से जन्म दिया ।

लिंगेगुहानन नभो ग्रह विष्णु संख्ये,
पुष्ये च सम्वति शम्भे किल सोमवारे ।
सः शावणे समभवत् प्रहरे तृतीये,
पञ्चेन्द्रिते सुदिवसस्य तिथौ विद्यातुः ॥४१॥

शिवा-अन्वयः—सः लिंगे गुहानन नभोग्रहविष्णुसंख्ये पुष्ये च शम्भति शम्भेकिल सोमवारे सः शावणे समभवत् । सिते पक्षे सुदिवसस्य तृतीये प्रहरे विद्यातुः तिथौ समभवत् किल ।

भावार्थः—सन् १६०६ तदनुसार श्रावण शुक्लपक्ष तृतीया सोमवार को इति के तीसरे प्रहर में श्री चन्द्रशेखर का जन्म हुआ ।

हित्पणी—अङ्गानां वामतो गतिः के अनुसार १६०६ को ६०६१ इस प्रकार लिखेगे—गुह अर्थात् कार्तिकेय के आनन अर्थात् मुख छः;

नभ अर्थात् आकाश शून्य, ग्रह नौ, विष्णु एक इस प्रकार १६०६ मित्र हुआ ।

जुलाई मासे अयथिके च विशेः,
शम्भे दिनाङ्के शुभलग्न योगे ।
पुष्य ग्रहे श्री जगरानि देव्या,
शम्भति सुतः प्रादुरभूद्वदान्यः ॥४२॥

शिवा-अन्वयः—जुलाई मासे अयथिके च विशेः शुभेदिनाङ्के शुभलग्न योगे पुष्य ग्रहे श्री जगरानि देव्या गर्भात् वदान्यः सुतः प्रादुरभूत् ।

भावार्थः—जुलाई मास के तेहसवें दिनाङ्के शुभलग्न योग तथा पुष्य ग्रह की स्थिति में श्री जगरानी देवी के गर्भ से परम वदान्य श्री चन्द्रशेखर का जन्म हुआ ।

अथात्मजं सत्पुरुषोचितानां, निरीक्ष्य राशि शुभलक्षणानाम् ।
लेभे सुदं फुलसरोरुहाक्षी, श्रीदेवकीवाप्य हरिं मुकुन्दम् ॥४३॥

शिवा-अन्वयः—अथ सत्पुरुषोचितानाम् शुभलक्षणानाम् राशिम् आत्मजम् निरीक्ष्य फुलसरोरुहाक्षी जगरानी मुकुन्दम् हरिम् आप्य श्रीदेवकी इव मुदम् लेभे ।

भावार्थ—इसके पश्चात् महापुरुषोचित श्रेष्ठ लक्षणों को राणि स्वरूप अपने नवजात शिशु को निराकरण प्रेमातिरेक से विकसित करने जैसे नेत्रवालो माता जगरानी उसी प्रकार प्रसन्न हुई जैसे भगवान् श्रीकृष्ण को प्राप्त कर माँ देवकी प्रसन्न हुई थीं ।

काष्ठा: प्रसन्नाः ससुखं त्रिलोकं वातो वृत्तौ मञ्जुलगन्धवाही ।
पूर्णं नभो दैवतशंखनादैजंन्मक्षणे वीरवरस्य तस्य ॥४४॥

शिवा-अन्वयः——तस्य वीरवरस्य जन्मक्षणे काष्ठा: प्रसन्नाः अभवत् । त्रिलोकम् ससुखम् अभवत् । वातः मञ्जुल गन्धवाही वृत्तौ । नभो दैवत शंखनादैः पूर्णम् अभवत् ।

भावार्थ—उन वीरश्रेष्ठ श्री चन्द्रशेखर के जन्म के समय पर समस्त दिशाएँ प्रसन्न हो गईं । त्रिलोक में आनन्द की लहर दौड़ गई । मनोहर मुरुमि के साथ वायु वहने लगा तथा आकाश मण्डल देवताओं के शंखनाद से अनुग्रहित हो उठा ।

ततः सुराः सादरपुण्डवृष्ट्या समभ्यनन्दन् नवजातवालम् ।
देवांगना मेघपटोपगूढमुख्यो मनोज्ञाः प्रजगुः सुगीताः ॥४५॥

शिवा-अन्वयः——ततः सुराः सादरपुण्डवृष्ट्या नवजातवालम् समभ्यनन्दन् । मेघपटोपगूढमुख्यः देवाङ्गनाः मनोज्ञाः सुगीताः प्रजगुः ।

भावार्थ—इसके अनन्तर देवताओं ने आदरपूर्वक मञ्जुलमय पृष्ठवृष्टि से इस नवजात बालक का अभिनन्दन किया एवं मेघपट से अपने मुख को आच्छादित करके देवाङ्गनाएँ सुन्दर एवं मधुर गीत गाने लगीं ।

सीतारामाभिधो विप्रः समाकर्णं सुतोद्भवम् ।
मुदं प्राप प्रहृष्टाङ्गः उपेन्द्रणेव कश्यपः ॥४६॥

शिवा-अन्वयः—सीतारामाभिधो विप्रः सुतोद्भवं समाकर्णं प्रहृष्टाङ्गः उपेन्द्रेण कश्यपः इव मुदम् प्राप ।

भावार्थ—द्वाहृणवर्य श्रीसीताराम त्रिपाठी पुत्र का जन्म सुनकर गुलकित एवं परमानन्द की अनुभूति करने लगे । उनका वह प्रमोद वैसा ही था जैसा कि भगवान् वामन को प्राप्त करके महर्षि कश्यप को हुआ था ।

हृष्ट्या सल्लक्षणं पुत्रं कृपां मत्वं शाम्भवीम् ।
वृत्तौ वानं हिजातिभ्यो विवधे शंकराचनम् ॥४७॥

शिवा-अन्वयः—(१:) पुत्रं पर्लक्षणं हृष्ट्या च शाम्भवीम् कृपां मत्वा हिजातिभ्यः वानं हवी । शाम्भवीत्वा विवधे ।

भावार्थ—उन त्रिपाठी ने पुत्र की श्रेष्ठ लक्षणों से पुक्त हृष्ट्या श्राहृणों को दान दिया एवं स्वयं भगवान् प्रकार का अभैन किया ।

आहूय वैदिकान् विप्रान् जातकर्मादिविश्वासीः ।
कारयामास सानन्दं स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ॥४८॥

शिवा-अन्वयः—(२:) वैदिकान् विप्रान् आहूय स्वस्तिवाचन पूर्वकम् शिशोः जातकर्मादिकम् कारयामास ।

भावार्थ—(उन्होंने) वैदिक द्वाहृणों को बुलाकर सानन्द मन से बालक का जातकर्म संस्कार कराया ।

अपरे च जनाः सर्वे विप्रस्य शुभचिन्तकाः ।
तेऽपि प्राप्ता सुखं भूरि वीक्ष्य बालकमद्भूतम् ॥४९॥

शिवा-अन्वयः—विप्रस्य शुभचिन्तकाः ये अपरे जनाः ते विभूतम् बालकम् वीक्ष्य भूरि सुखं प्राप्ताः ।

भावार्थ—और जो भी श्रीसीताराम त्रिपाठी के शुभचिन्तक थे वे सबके सब इस अद्भुत बालक को देखकर प्रसन्न हुए ।

उत्पन्नोऽयं सुतो नूनं, प्रसादात् चान्द्रशेखरात् ।
अतश्चकार तं नामा, स्वसूनुं चान्द्रशेखरम् ॥५०॥

शिवा-अन्वयः—अथम् पुत्रः चान्द्रशेखरात् प्रसादात् नूनं उत्पन्नः अतः तम् स्वसूनुम् नामा चान्द्रशेखरम् चकार ।

भावार्थ—यह पुत्र निश्चय ही भगवान् चन्द्रशेखर शिव के प्रसाद से उत्पन्न हुआ है, इसलिए श्री सीताराम त्रिपाठी ने अपने पुत्र का नाम चान्द्रशेखर रखा ।

अथ समग्रमहीतलमण्डनः, शिशुजनोचितमञ्जुलीलया ।

अनुदिनं पितरौ समरीरमत्, नवरविवेनजातचयं यथा ॥५१॥

शिवा-अन्वयः—अथ यथा नवरविवेनजातचयम् तथा समग्रमहीतलमण्डन शिशु जनोचित मञ्जुलीलया पितरौ अनुदिनम् समरीरमत् ।

भावार्थ—इसके अनन्तर जिस प्रकार बाल सूर्य कमलसमूह को आनन्दित करते हैं उसी प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी के आभूषणस्वरूप चन्द्र-

शेष शिशु बाललीला से अपने माता-पिता को आनंदित करने लगे ।

मधुरयामृत सम्प्रितया गिरा, मुखदच्छवलदाहशिलोकनः ।
प्रहस्तैरचिरं शिशुकौतुकैः, स जनतामुखभाजनतामगात् ॥५२॥

शिवा-अन्वयः—सः मधुरया अमृतसम्प्रितयागिरा मुखदच्छवल
चारुप्रहसितं शिशुकौतुकैः अचिरं जनतामुखभाजनताम् अगात् ।

भावार्थ—वह चन्द्रशेखर अमृत के समान मधुरदाणी तथा मुखद
एवं चंचल चितवन और स्वाभाविक हास आदि बालकौतुकों से
अतिशीघ्र जनसमूह के सुख के पात्र बन गये ।

टिप्पणी—जनतामुखभाजनताम् जनानां समूहः जनता 'ग्राम जन-
चन्द्रम्यस्तल' इति पाणिनीयसूत्रे समूहे तल् प्रत्ययः जनतायाः सुखं
जनता सुखं तस्य भाजनं जनतामुखभाजनं तस्य भावः इति जनतामुख
भाजनता ताम् जनतामुखभाजनताम् ।

लघु मुलक्षणमङ्गुष्ठदाम्बुद्धो, नखदचा विजितोऽुपसौभगः ।
बृहदुरा: शिशुभूषणभूदितः सबलबालमृगाधिपकंधरः ॥५३॥

शिवा-अन्वयः—अन्वयः सुगमः ।

भावार्थ—बालक चन्द्रशेखर के चरण छोटे-छोटे तथा सामुद्रिक
लक्षणों से युक्त तथा कमल के समान कोमल थे । बालक ने नख की
कान्ति से चन्द्रमा को शोभा को जीत लिया था । बालक का वक्षस्थल
विशाल था बालक बालोचित आभूषणों से विभूषित था । उसकी कन्धरा
बलवान सिंह शावक जैसी मुद्दः थी ।

टिप्पणी—लघुनी मुलक्षणे मंजुनी पदाम्बुजे यस्य तथाभूतः
नखानाम् रुक्नखरक् तथा नखरुचा, उडुन् नक्षत्राणि पाति इति उडुपः
चन्द्रमा तस्य सोभगं शोभा विजितं उडुपस्य सोभगं येन तथाभूतः, बृहद
उरः वक्षस्थलं यस्य तथा भूतः, सबलो यः बालमृगाधिपः इति सबलबाल
मृगाधिपः तस्य कंधरा इव कंधरा यस्य सः सबलबालमृगाधिपकंधरः ।

अहणपञ्चजकोषकरोल्लस्त्, सुकरजः कमलारुणलोचनः ।
सुचिबुकः शुकसम्मितनासिकः, छविनिधिः सुकुमार कलेवरः ॥५४॥

शिवा-अन्वयः—अन्वयः सुगमः ।

भावार्थ—शिशु चन्द्रशेखर के करलाल कमल के कोश के समान
सुन्दर थे जिनमें नन्हीं-नन्हीं अंगूलियां शोभित हो रही थीं । नेत्र अरुण

धर्म दल के समान सलीमे थे । मुद्दर चिदुक पूर्व तोते की ओर के समान
नातिका थी तथा बगलक छपि तो निशि पूर्व भव्यात् गुरुमार शरीर से
मुशोभित था ।

टिप्पणी—समासः पूर्ववत् ।

कलितहासनवेन्दुसमाननस्तिलकमणितभव्यललाटकः ।

मधुपनिन्दकमेच्चलकुन्तलः स शुशुभे सुषमाभिव शोभयन् ॥५५॥

शिवा-अन्वयः—कलितहासनवेन्दुसमाननस्तिलकमणितभव्यललाटकः
मधुपनिन्दकमेच्चलकुन्तल सः सुषमा शोभयन् इव शुशुभे ।

भावार्थ—बालोचित हास युक्त पूर्णचन्द्र के समान मुख बाला, रक्षा
तिलक रो गुजोभित, भव्य ललाट एवं भ्रमरों को तिरस्कृत करने वाले
पाले धैर्यराजे बालों से युक्त वह बालक चन्द्रशेखर लुषमा अर्थात् परम
शोभा को मुशोभित करता हुआ सा सुशोभित होता था ।

मृहुपदाम्बुजमम्बुजपाणिना, परिनिवेश्य मुखाम्बुरुहे पिबन् ।

स कलयन् जलजत्रयसस्त्रमस्, अनुचकार मुकुन्दविवेष्टितम् ॥५६॥

शिवा-अन्वयः—अम्बुजपाणिना मृहुपदाम्बुजम् मुखाम्बुरुहे परि-
निवेश्य जलजत्रयसेभ्रमम् कलयन् सः मुकुन्दविवेष्टितम् अनुचकार ।

भावार्थ—वह बालक चन्द्रशेखर कमलकर से कमलधरण को
कमल मुख में लेकर अंगूठा चूसता हुआ तीन कमलों के सौन्दर्य को सम-
षेत रूप से धारण करता हुआ भगवान् बालमुकुन्द की चेष्टा कर अनु-
करण कर रहा था ।

टिप्पणी—पौराणिक कथा के अनुसार प्रलयकाल में उमड़े हुए
समुद्र की लहर में तैरते हुए अक्षयवट के पत्र पर अंगवान् बालमुकुन्द
परमात्मा नन्हे से शिशु के रूप में विराजमान होकर अपने चरण का
अंगूठा चूस रहे थे यथा—

करारविन्देनपदारविन्दे, मुखारविन्दे विनिवेश्यन्तम् ।

वटस्य पत्रस्य पुटे शयाने, बालं मुकुन्दं मनसा स्मरामि ॥

कलकलैलंपनैः सुध्याभितैः किलकितैहेसितैः श्वसितैः स्त्रितैः ।

मुहचिरैः करपादविचालनैः स रमयन् रमते स्म कृटम्बकम् ॥५७॥

शिवा-अन्वयः—सः कलकलैः लपनैः मुध्या आत्रितैः किलकितैः
हेसितैः श्वसितैः स्त्रितैः सुम्भिरैः करपादविचालनैः कृटम्बकम् रमयन्
रमते स्म ।

(२३)

(२२)

भावार्थ—वह बालक अत्यन्त मधुर अव्यक्त अमृतयुक्त बचनों से किलकारी सहज हास सारिवक श्वेत मुस्कान अत्यन्त सुन्दर हाथ एवं चरणों का चलाना आदि बालसुलभ चेष्टाओं से परिवार को आनन्दित करता हुआ स्वयं बालकीड़ा करने लगा।

सरलखड्जनशावमसौ शशी, स्वदशमेत्य किमातनुते रुचिम् ।

चलदशा कल कज्जल शोभिना शिशुमुखेन जनो अममादधे ॥५०॥

शिवा-अन्वयः—असी शशी सरलखड्जनशावम् स्वदशम् एत्य किम् रुचिम् आतनुते इति कलकज्जलशोभिना चलदशा शिशुमुखेन जनः अमम् आदधे ।

भावार्थ—अरे ! यह चन्द्रमा भोले-भाले एवं खड्जन शावक को बया अपने वज्र में करके शोभा बड़ा रहा है इस प्रकार काजल के डिठीने से सुशोभित एवं चञ्चल नेत्र बाले बालक के मुख से लोगों को अम होने लगा ।

टिप्पणी—यहाँ नेत्र की उपमा खड्जन से मुख की उपमा चन्द्र से दी गई है ।

तमनुलाल्य समीक्ष्य मुखाम्बुजं प्रहसितं परिपाद्य पयोधरम् ।

नयनसम्मितमर्भकवत्सला परिचुचुम्ब मुदा जननी सती ॥५१॥

शिवा-अन्वय—अर्भकवत्सला सती जननी प्रहसितम् नयन सम्मितम् तम् अनुलाल्य मुखाम्बुजम् समीक्ष्य पयोधरम् परिपाद्य मुखा-म्बुजम् परिचुचुम्ब ।

भावार्थ—पुत्र पर वात्सल्य रखने वाली पतिव्रता माँ ने अपने नेत्र के समान प्यारे उस बालक को दुलार कर मन्दहास युक्त मुखकमल को निहार कर स्नेह पूर्ण स्तन्यपान कराकर बालक के मुख कमल को चूम लिया ।

प्रलपनंभं वेति मनोहरंदशनकंर्महितं वनजोपमम् ।

सततहृष्टसुखं जननीसुखं शिशुमवेश्य निरातिशयं ययौ ॥५०॥

शिवा-अन्वय—ममवेति मनोहरः प्रलपनः दशनकः महितम् वन जोपमम् सततहृष्टमुखम् शिशुम् अवेश्य जननी निरातिशयम् सुखम् ययौ ।

भावार्थः—माँ-माँ, बाबा, इस प्रकार मनोहर बोली एवं छोटी-छोटी दो-दो दंतुलियों से सुशोभित कमल के समान सुकोमल निरन्तर

प्रसन्न मुख बाले शिशु खड्जेखर को निहारकर जाताधी निरातशय आनन्द को प्राप्त हुई ।

अथ पितुः कलयत्नसहस्रकैः, रतिमनुष्यगुणः शिशुवत्सः ।

विलुरिवावयवैः स नवोदयः, प्रतिदिनं वद्युधे सितपक्षकै ॥५१॥

शिवा-अन्वयः—अथ अतिमनूष्य गुणः सः उत्तमः शिशु पितुः कल-यत्न सहस्रकैः सितपक्षके नवोदयः विद्युः इव अवयवैः प्रतिपदम् वद्युधे ।

भावार्थः—इसके अनन्तर अतिमानवीय गुणों से युक्त वह उत्तम बालक चन्द्रशेखर अपने पिता श्री सीताराम त्रिपाठी के सहस्रों प्रयासों से लालित होता हुआ शुक्ल पक्ष के नवीन चन्द्र की भाँति अपने कलारूप अवयवों से प्रतिपद बढ़ने लगा अर्थात् जैसे चन्द्रमा अपनी दिव्य कलाओं से पन्द्रह दिनों में ही पूर्ण हो जाते हैं उसी प्रकार अपने दिव्य अंगों की समृद्धि से बालक शीघ्रता से बड़ा होने लगा ।

अवनि भण्डन हेतुरयं ध्रुवं, रिपुकुलाम्बुजकर्कशमः शिशुः ।

वसुमतीति विभाव्य समादरात्, तमुपवेश्य मुद्रं परमां गता ॥५२॥

शिवा-अन्वयः—अथम् शिशु अवनिमण्डनहेतुः रिपुकुलाम्बुजकं समः ध्रुवम् इति विभाव्य वसुमती तम् समादरात् उपवेश्य परमाम् मुद्रम् गता ।

भावार्थः—यह बालक निश्चय ही भविष्य में पृथ्वी के अलंकरण का कारण बनेगा और यह शत्रुकुलरूप कमल को नष्ट करने के लिए कर्क अर्थात् ओले के समान होगा । इस प्रकार विचार करके पृथ्वी आदर-पूर्वक चन्द्रशेखर को अपनी गोद में बिठाकर अतीव आहलाद को प्राप्त हुई अर्थात् अब बालक चन्द्रशेखर थोड़ा-थोड़ा बैठने लगा ।

चिरविद्युक्तमिवारिकुलादितं, विकलभारतमाशु लिलिङ्गिषुः ।

निजपदा वसुधाम्च कृतार्थ्यन्, स करपलवजानुचरोऽभवत् ॥५३॥

शिवा-अन्वय—सः चिरेवद्युक्तम् अरिकुलादितम् विकलभारतम् आशु इव निजपदा वसुधाम् कृतार्थ्यन् करपलवजानुचरः अभवत् ।

भावार्थ—बहुत काल से बिछड़े हुए शत्रुगणों द्वारा पीड़ित व्याकुल भारत-भूमि को आँलिगत की इच्छा करते हुए से अपने चरणों से भूमि को कृतार्थ करते हुए कर पल्लव एवम् घुटनों के सहारे चलने लगे ।

विलुरितालिकुलालकभूषितः कवलकल्पितकञ्चकपोलकः ।

प्रियतया सुरजोभिरलकृतः, स सुखं विच्चार महामनाः ॥५४॥

शिवा-अन्वयः—विलुलितालि कुलालक भूषितः कवल कल्पित कञ्चकपोलकः प्रियतया सुरजोभिः अलंकृतः स महामनाः सुखम् विच्चार ।

भावार्थः—मैं डरते हुए भ्रमर समूहों के समान सुन्दर ब्रह्मारली अलकावली से सुभोगित तथा अपने मुख में लिये हुए सुन्दर दही-भात के ग्रास से कुछ उमड़े हुए कपोल से सलोना लगता हुआ भारत-भूमि की के कारण सुन्दर धूलि से धूसरित व मनस्वी बालक अब सुखपूर्वक पृथनों के बल चलने लगा ।

अतिमनोहरधूलिकरं वहन्, स्वशिरसावयवैश्च सुकोमलैः ।
विहितभारतभाग्यविभूषणश्वरणचारमथारभतार्भकः ॥६५॥

शिवा-अन्वयः—अथ विहितभारतभाग्यविभूषणःत्र्यक्षः स्वशिरसः च सुकोमलैः अवयवैः अतिमनोहरधूलिकरम् वहन् श्वरणचारम् आरभत ।

भावार्थः—इसके अनन्तर भारत के भाग्य को विभूषित करने वाले बालक चन्द्रशेखर ने अपने शिर तथा सूकुमार अंगों से अत्यन्त मनोहर धूलि कणों को धारण करते हुए चरणों से चलना आरम्भ कर दिया ।

अथास्य चूडाकरणे श्रुतिज्ञान् विप्रान् समाहृय महाभनस्वी ।
अचीकरत् वैदिकमन्त्रघोषपुरःसरं धर्मविदां वरेण्यः ॥६५॥

शिवा-अन्वयः—अथ धर्मविदाम् वरेण्यः महाभनस्वी (श्रीसीताराम विप्राठी) श्रुतिज्ञान् विप्रान् समाहृय वैदिकमन्त्रघोषपुरःसरम् अस्य चूडाकरणम् अचोकरत् ।

भावार्थः—इसके अनन्तर धर्मज्ञों में श्रेष्ठ महान मनस्वी श्री सीताराम विप्राठी ने वेदज्ञ द्वाह्यणों को बुलाकर वैदिक मन्त्रवाचन पूर्वक बालक चन्द्रशेखर का चूडाकरण संस्कार करावा ।

स बालरूपोऽप्यति बालतेजाः सुसाहसी सद्य पराक्रमस्य ।

रेमे शिशून् क्रान्ति विद्यानयोग्यान् कुर्वन्निवानेकविचेष्टितंश्च ॥६६॥

शिवा-अन्वयः—सः बालरूपः अपि अतिबालतेजाः सुसाहसी पराक्रमस्य सद्म अनेकविचिष्टितः शिशून् क्रान्तिविद्यान् योग्यान् कुर्वन् इव रेमे ।

भावार्थः—वे चन्द्रशेखर बालक होने पर भी अन्य बालकों की अपेक्षा अत्यधिक तेजस्वी थे । उनमें कुरीतियों का दमन करने के लिए अलीकिक साहस था वे पराक्रम के तो भाण्डागार ही थे । अब अपनी बाल क्रीड़ा के क्रम में अपनी अनेक क्रान्तिकारी चेष्टाओं से अन्य मित्र बालकों को मानो क्रान्ति विद्यान के योग्य बनाते हुए बालोचित खेल-खेलने लगे ।

(२६)

नवांश्चिकित्सामधिपादनीश्चा च लौहवृथनेत्वात्तुमीलः ।
सुकूर्वनेश्वरश्वरवीक्षीयैश्वर श्वरश्वरवीक्षीकरोति ॥६७॥

शिवा-अन्वयः—अर्माणिक्षीलः स नवांश् विशूनाम् भाष्म-पत्थम् इत्वा क्रीड़ति सुकूर्वनेश्वरवीक्षीयैश्वराश्वरनः च तान् आकृती करोति ।

भावार्थः—बालसिंह जैसे चेष्टा वाले वे चन्द्रशेखर कहीं-कहीं गमस्त बालकों के अधिष्ठित अर्थात् नेता बनकर उन्हें अनेक प्रकार से खेल खेलना चिंताते हैं । अपनी ऊँची कूद, चब्बल चितवन तथा द्रुत गति से धारण अर्थात् तेज दौड़ आदि लाधवूर्ण कीड़ाओं से वे सभी बालकों को छकित कर देते हैं ।

प्रारम्भतस्तत्स्य निरीक्ष्य बालाः स्वातन्त्र्यनिष्ठां भवश्वन्यताऽन्य ।
क्रीडास्वपि क्रान्तिमसद्विच्चारेन्तारमेन हृदयेन भेजुः ॥६८॥

शिवा-अन्वयः—बालाः प्रारम्भत तस्य स्वातन्त्र्य निष्ठाम् च भय नायताम् क्रीडासु अपि असद् विचारैः क्रान्तिम् निरीक्ष्य हृदयेन एनम् नेतारम् भेजुः ।

भावार्थः—प्रारम्भ से ही बालकों ने चन्द्रशेखर की स्वतन्त्रता के प्रति निष्ठा, निर्भीकता तथा बालकों के खेलों में भी बुरे विचार बाले अर्थात् खेल में झूठ बोलकर रुगदासी (बेर्इमानी) करने वाले बालकों के साथ क्रान्ति देखकर इन्हीं बालक चन्द्रशेखर को हृदय से अपना नेता मान दिया ।

नेता शिशूनां द्विषतां विनेता, सत्कान्तिवेत्ता च सतामन्तेता ।

छेत्ता रिपूणां शशिशेखरोऽसी, बभौ यथा बालरविः प्रभाते ॥७०॥

शिवा-अन्वयः—शिशूनाम् नेता द्विषताम् विनेता च सत्कान्ति वेत्ता सताम् अभेत्ता रिपूणाम् छेत्ता असौ शशिशेखरः प्रभाते बालरविः यथा बभौ ।

भावार्थः—बालकों के नेता शत्रुओं को दण्ड देने वाले क्रान्ति पद्धति के श्रेष्ठ जाता एवं सज्जनों के पालक, शत्रुओं को छिन्न भिन्न करने वाले वे चन्द्रशेखर प्रभात काल में बाल-सूर्य के समान सुशोभित हुए अर्थात् जैसे प्रातःकाल में भगवान् सूर्य बालरूप यानी अल्पकिरणों से लघु आकार से युक्त होकर अपने वधिष्ठु तेज से शोभित होते हैं उसी प्रकार बालक चन्द्रशेखर अपने जीवन के प्रभातरूप बाल्यकाल में ही उत्कृष्ट तेज से सुशोभित हो रहे थे ।

(२७)

कदचिद्वालोक्य शिवप्रताप विचित्रचित्राणि विलम्बितानि ।

स तत्क्षणं वीररसाद्यि मध्येप्रफुल्लरोमा निममञ्ज धीरः ॥७१॥

शिवा-अन्वयः—कदाचित् सः अवलम्बितानि शिवप्रतापविचित्र चित्राणि आलोक्य तत्क्षणम् प्रफुल्लगात्रः धीरः वीररसाद्यिमध्ये निममञ्ज ।

भावार्थः—किसी समय वीर बालक चन्द्रशेखर ने अपने घर में टंगे हुए छत्रपति शिवाजी एवं महाराणा प्रताप के वीरोचित परिवेश में बने हुए विचित्र चित्रों को निहारा । उसी समय उनका शरीर रोमांचयूण हो गया और वे वीररस महासागर के मध्य गोते लगाने लगे ।

स वीरभावोद्धृतभीमवीचित्राङ्कारसंच्छोभित दिग्बिभागः ।

यथा पयोधिः पुलकाङ्गयिष्टः पुनः पुनर्दोरखंजगर्जः ॥७२॥

शिवा-अन्वयः—सः पुलकाङ्गयिष्टः वीरभावोद्धृतभीमवीचित्राङ्कारसंच्छोभित दिग्बिभागः पयोधिः यथा पुनः पुनः धोररवं जगर्जः ।

भावार्थः—तत्क्षण बालक चन्द्रशेखर का यष्टिका के समान दुबलापतला शरीर पुलकित हो उठा एवं वीर भाव रूप उद्धृत लहरों वाले तथा अपनी झंकुआर से समस्त दिग्बिभागों को चलायमान करने वाले विशाल सागर की भौति वे बार-बार घोर गजंना करने लगे ।

संस्मृत्य तत् त्यागमदम्यवीर्यं द्विषद्विरोधं निजधर्मनिष्ठाम् ।

क्रोधप्रभामासुरपञ्चजास्यः, सुप्तो यथा वीररसः प्रबुद्धः ॥७३॥

शिवा-अन्वय—तत्यागम् अदम्यवीर्यम् द्विषद्विरोधम् निजधर्मनिष्ठाम् संस्मृत्य सुप्तः वीररसः प्रबुद्धः यथा क्रोधप्रभामासुरपंकजास्य आसीत् ।

भावार्थः—छत्रपति शिवाजी एवं महाराणा प्रताप के अपूर्व त्याग, अदमनीय पराक्रम, शत्रुओं के साथ प्रबल विरोध तथा अपनी सनातन धर्म के प्रति निष्ठा को स्मरण कर चन्द्रशेखर ऐसे लग रहे थे मानो साकात् वीररस ही सोकर जगा हो । उनका कमलवत् मुख ऋध की प्रभा से कन्तिमान् हो उठा था ।

सस्पन्दगात्रस्तरुणप्रतापप्रभाकराभस्फुरिताधरोषः ।

सुरक्तनेत्रो ध्रुकुटीकरालो, गजान् निरीक्ष्योद्धृत् केसरीव ॥७४॥

शिवा-अन्वयः—सः सस्पन्दगात्रः तरुणप्रतापप्रभा करामः स्फुरितप्रोष्ठः सुरक्त नेत्रः ध्रुकुटीकरालः गजान् निरीक्ष्य उद्धृतकेसरी इव धूम इति पोः ।

(२८)

भावार्थ—बालसूर्य के समान तरुणप्रताप से युक्त बालक चन्द्रशेखर के पार्श्व में कंपन होने लगा और ओष्ठ स्फुरित हो लगे तथा नेत्र नाल हो गये । उद्धी हुई ध्रुकुटि के कारण बालक का मुखमण्डल कराल हो गया । हाथियों को निहारकर उद्धृत हुए सिंह के समान चन्द्रशेखर शत्रुओं के नाश के लिए उत्सुक हो उठे ।

आमुननासाभ्रुनिवद्धमुष्टिः, संदश्य ददिभः स्फुरिताधरोष्ठम् ।

तौ भवितभावाच्छिदरसा प्रणम्य, प्रतिश्रुतोऽरातिवधे तदाभूत् ॥७५॥

शिवा-अन्वयः—सः चन्द्रशेखरः आमुननासाभ्रुनिवद्धमुष्टिः स्फुरिताधरोष्ठम् ददिभः संदश्य तौ (शिवप्रतापो) भवितभावात् शिरसप्रणम्य तदा अरातिवधे प्रतिश्रुतः अभूत् ।

भावार्थ—बालक चन्द्रशेखर की नासिका और भौहें चढ़ गयी एवं उन्होंने मुष्टिका वौध ली तथा अपने दाँती से कंपित अधरोष्ठों को चबाकर भवितभाव से शिवाजी एवं महाराणा प्रताप को शिर से प्रणाम करके शत्रुओं के बध की प्रतिज्ञा करली ।

ततः स्वदेशोत्कटदैन्य दास्यस्मृतिप्रदीप्तोद्धृत कोपवहिनः ।

तयोः पुरस्तादतिविभन्नचित्तशक्तार वीरः कठिनां प्रतिज्ञाम् ॥७६॥

शिवा-अन्वयः—ततः स्वदेशोत्कटदैन्यदास्यस्मृतिप्रदीप्तोद्धृत कोपवहिनः अतिविभन्नचित्तः वीरः तयोः पुरस्तात् कठिनाम् प्रतिज्ञाम् चकार ।

भावार्थ—इसके अनन्तर अपने देश की दारण दीनता तथा परतन्त्रता के स्मरण से बालक चन्द्रशेखर का क्रोधानल और उद्धृत हो गया, तथा उस वीर शिशु ने महाराणा प्रताप एवं शिवाजी के समक्ष कठिन प्रतिज्ञा की ।

प्रताप ! मातृप्य महोप्रतापम्, मा खिद्यतां खिन्नमनाः शिवोऽपि ।
को नाम तापः प्रथितप्रतापे, देशोऽशिवं कुत्र शिवाधिरूढः ॥७७॥

शिवा-अन्वयः—हे प्रताप ! महोप्रतापम् मातृप्य अपि खिन्नमनाः शिवः मा खिद्यताम् प्रतापे प्रथिते देशे को नाम तापः शिवाधिरूढः देशे कुत्र अशिवम् ।

भावार्थ—हे महाराणा प्रताप आप शोक संतप्त न हों और हे छत्रपति शिवाजी आप खिन्न मन से खेद का अनुभव न करें । भला जिस

(२९)

देश में महाराणा प्रताप हों वहाँ ताप कैसा ? एवं जहाँ शिवा जैसे छत्रपति की छुवळाया हो वहाँ अशिव अर्थात् अकल्याण कैसा ?

युवां स्वदेशाय समस्तसौर्यं, त्यक्त्वा स्वधर्मं व्यजमाश्यन्ते ।

आजीवन बाहुबलानलोक्तु, संग्राम भाष्टु यवनानभाष्टम् ॥७८॥

शिवा-अन्वयः—युवाम् आजीवनम् स्वदेशाय समस्तसौर्यम् त्यक्त्वा स्वधर्मेष्यजम् आश्रयन्ते बाहुबलानलोद्यत् संग्रामभाष्टेष्यवनान् अभाष्टम् ।

भावार्थः—आप दोनों अपने देश के कल्याण के लिए समस्त सुखों को त्यागकर जीवन पर्यन्त अपने भुजबल से प्रगट किये हुए युद्ध रूप भाड़ में शत्रुओं को भूतते रहे ।

टिप्पणी—बाहुबलं एव अनलः बाहुबलानलः तेन उद्यन् यः संग्रामः तदेव भाष्टम् तस्मिन् ।

अहो स्वदेशीयदुरात्मवृत्तैः, प्रतारिताभ्यां विपदादिताभ्याम् ।

नाङ्गीकृतं वैरिकुलस्य दास्यं, त्यक्तःस्वदेहो वलिवेदिकायान् ॥७९॥

शिवा-अन्वयः—अहो स्वदेशीय दुरात्मवृत्तैः प्रतारिताभ्याम विपदा अदिताभ्याम्-युवाभ्याम् वैरिकुलस्य दास्यम् न अगीकृतम् वलिवेदिकायाम् स्वदेहः त्यक्तः ।

भावार्थः—आश्चर्य है कि अपने ही देश के कुछ दुष्टों द्वारा बार-बार ठगे जाने पर भी निरन्तर विपतियों से फ़ीहित होने पर भी आप लोगों द्वारा शत्रुओं की पराधीनता नहीं स्वीकारी गई । प्रत्युत अपना शरीर ही वलिवेदिका पर चढ़ा दिया गया ।

स्वराज्यहेतोस्तृणवद् विसृज्य, दारान् गृहृचंकमितं वनेषु ।

कदापि नो निक्षिपतः स्म धैर्यं, तथापि देशे न भवत् कृतज्ञः ॥८०॥

शिवा-अन्वयः—स्वराज्यहेतो दारान् गृहम् तृणवत् विसृज्य वनेषु चंकमितम् कदापि धैर्यम् न निक्षिपतः स्म तथापि देशे भवत् कृतज्ञः न ।

भावार्थः—आप लोग स्वराज्य के लिये पत्नी घर आदि सांसारिक सुखों को तृणवत् छोड़कर बन-बन भटकते रहे, कभी भी धैर्य नहीं छोड़ा । इतने पर भी इस लोक के प्राणी आपके कृतज्ञ नहीं हैं ।

आश्वस्तचित्ती भवता भवन्तौ शोध्य क्वोऽप्येषिषुरक्ततोर्यः ।

तः सम्प्रदास्यामि तिलाङ्गलि बासेषा प्रतिज्ञा शशिशेषरस्य ॥८१॥

शिवा-अन्वयः—भवन्तौ आश्वस्तचित्ती भवताम् कवाणः ग्र्य-राततोर्यः तःशोध्यम् वाम् तिलाङ्गलिम् सम्प्रदास्यामि शशिशेषरस्य एषा प्रतिज्ञा ।

भावार्थः—हे महाराणा प्रताप ! हे छत्रपति शिवाजी ! आप दोनों स्वस्थ चित्त रहें मैं अति शीघ्र ही शत्रुओं के गर्म-गर्म रक्त रूप जल से आप दोनों तिलाङ्गलि दूँगा चन्द्रशेखर की यही प्रतिज्ञा है ।

यादन्न शौराङ्गः कुनीतिभीति भीतामिमां भारतवर्षम् ।

मुक्तां विधास्ये परतन्त्रतात्सतादन्त्रजात्याति मुक्तं न शान्तिम् ॥८२॥

शिवा-अन्वयः—गौराङ्गः कुनीतिभीति भीताम् इमाम् भारतवर्षम् परतन्त्रतातः यावत् न मुक्ताम् विधास्येतावत् न मुखम् न शान्तिम् यास्यामि ।

भावार्थः—जब तक अंग्रेजों की कुनीति के जास दे भवभीत इस भारत-भूमि को परतन्त्रता से मुक्त न कर लूँगा तब तक न शान्ति और न मुख प्राप्त करूँगा ।

इत्थं प्रतिज्ञाय दृष्टप्रतिज्ञो बालः, स बालाकं समप्रतापः ।

प्रेषणा परिष्वज्य तदीयचित्रे, सनीरनेत्रः प्रणनाम भूयः ॥८३॥

शिवा-अन्वयः—इत्थम् बालाकं समप्रतापः दृष्ट प्रतिज्ञः सबालः प्रतिज्ञाय तदीयचित्रे प्रेषणा परिष्वज्य भूयः सनीरनेत्रः प्रणनाम ।

भावार्थः—बाल सूर्य के समान प्रतापपुंज प्रतिज्ञा में दृष्ट रहने वाले बालक चन्द्रशेखर ने इस प्रकार प्रतिज्ञा करके महाराणा प्रताप एवं शिवाजी के चित्रपटों को प्रेम से हृदय से लगाकर अश्रूपूरित नेत्रों से पुनः पुनः भक्ति पूर्वक प्रणाम किया ।

तदा प्रभूत्यस्य महाभुजस्य चित्तं निवृत्तं जगतीविलासात् ।

रवतन्त्रताप्राप्तिविमित्तमूत्रयत्नान्, सदा सस्पृहमःवपश्यत् ॥८४॥

शिवा-अन्वयः—तदा प्रभूति अस्य महाभुजस्य चित्तम् जगती-विलासात् निवृत्तम् सदा सस्पृहम् रवतन्त्रताप्राप्तिविमित्तमूत्रयत्नान् अन्वपश्यत् ।

भावार्थः—उस समय से ही उस महावाहु बालक चन्द्रशेखर का चित्त संसार के मुख से निवृत्त हो गया । अब तो वे निरन्तर स्वृहा पूर्वक स्वतन्त्रता प्राप्ति में सहायक बनने वाले उपायों के ही सम्बन्ध में सोचने लगे ।

एवं पितृभ्यां परिपाल्यमानः, समुद्धृतं मानसुखं शिशूनाम् ।
विचिन्तयन् देशहितं सदैव, स शैशवं स्नेहमयं निनाय ॥८५॥

शिवा-अन्वयः—एवम् सः (चन्द्रशेखरः) दितृभ्याम् परिपाल्यमानः
पिण्डानाम् मानसुखम् समुद्धृत् सदैव देशहितम् विचिन्तयन् शैशवम्
स्नेहमयम् निनाय ।

भावार्थः—इस प्रकार अपने माता-पिता के द्वारा लाइ-प्यार में
पाले जाते हुए—बालकों के सम्मान, सुख को स्वीकार करते हुए, निरन्तर
देशहित के चिन्तन में तत्त्वर रहकर बालक चन्द्रशेखर ने अपना स्नेहपूर्ण
बाल्यकाल विता दिया ।

अथोपबोतक्रियया द्विजेन्द्रः, सुसंस्कृतम् संस्कृतवान् कुमारम् ।

विचित्रमौङ्ज्जी सुपलाशाली, परीक्षितं स्वर्गंभिवावभी सः ॥८६॥

शिवा-अन्वयः—अथ द्विजेन्द्रः (सीताराम त्रिपाठी) सुसंस्कृतम्
कुमारम् उपबोतक्रियया संस्कृतवान् विचित्रमौङ्ज्जी सुपलाशाली सः
(बाल चन्द्रशेखरः) स्वर्गं इव आवस्ती ।

भावार्थः—जीव अर्थात् पौच वर्ष पश्चात् ब्राह्मणयेष्ठ श्री सीताराम
त्रिपाठी ने प्राकृतन संस्कारों के सम्पन्न बालक चन्द्रशेखर को वेदविहित
उपनयन क्रिया से संस्कृत अर्थात् ब्राह्मणोच्चितं संस्कार से सम्पन्न किया ।
सुन्दर मौजी मेखला तथा पलाश देह से युक्तबालक चन्द्रशेखर अग्नि
में परीक्षित (तपाये हुए) सुवर्ण की भाँति मुशीभितहोने लगे ।

लिपि यथावत् सुरनागरीं तमशिक्षयन् वं गुरवो गरिष्ठाः ।
प्रारंभिकीस्वल्पदिवर्ननेन, शिक्षा गृहीता सुविचक्षणेन ॥८७॥

शिवा-अन्वयः—गरिष्ठाः गुरवः तम् सुरनागरीम् लिपिम् यथावत्
अशिक्षयन् अनेन सुविचक्षणेन स्वल्पदिवर्नप्रारम्भिको शिक्षा गृहीता ।

भावार्थः—थेष्ठ गुरुओं ने बालक चन्द्रशेखर को यथावत् देव-
नागरी लिपि का ज्ञान कराया । इस अनुप्तन बालक ने बहुत थोड़े दिनों में
प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त कर ली ।

अनन्तरं देववशादकालात्, संचास्यमानो द्विजदम्पती ती ।

संसन्तती जग्मनुरन्मनस्को, स्वजीविकारै नितरां विषण्णी ॥८८॥

शिवा-अन्वयः—अनन्तरम् देववशात् अकालात् संचास्यमानो ती
द्विजदम्पती उन्मनस्को नितराम् विषण्णी संसन्तती जग्मनुवदरकाग्रामात्
इतिषेषः ।

भावार्थः—इसके अनन्तर दैवयोग से आये हुए दुष्काल से भयभीत
उद्दिग्न अत्यन्त दुखी होकर वे ब्राह्मण दम्पति अपने पुत्रों के साथ
जीवका अर्जन हेतु बदरका ग्राम से चले गये ।

युगं धिगेतद् द्रविणप्रधानं सीदन्ति यस्मिन् सुजना दरिद्राः ।

काकाः कखन्त्यपितभूरिमुक्ताः क्षीरं विना हा च्छ्रियते भरातः ॥८९॥

शिवा-अन्वयः—द्रविणप्रधानम् एतद् युगं धिक् यस्मिन् सुजना:
दरिद्राः सीदन्ति हा अपितभूरिमुक्ताः काकाः कखन्ति क्षीरं विना भरातः
च्छ्रियते ।

भावार्थः—धिवकार है इस युग को जिसमें धन की ही प्रधानता है
जिसमें सज्जन लोग दरिद्र बनकर दुःख पाते हैं, क्लेश है सुन्दर मोतियों
को पाकर कौवे हँसते हैं तथा बेचारा राजहंस दूध के विना तड़प कर
मर जाता है ।

जांस्यञ्चलस्थे शुचि भावराख्ये, ग्रामे सदा सस्यजनाभिरामे ।

आगत्य विषः सह दारपुत्रस्तत्र स्वकीयां वसतीं व्यधत ॥९०॥

शिवा-अन्वयः—जांस्यञ्चलस्थे सदा सस्यजनाभिरामे शुचिभाव
राख्ये तत्र ग्रामे आगत्य सहदारपुत्रः विषः स्वकीयाम् वसतीं व्यधत ।

भावार्थः—सुन्दर फसल एवं जनता से मुशोभित जासी अंचल में
स्थित पवित्र भावरा नामक ग्राम में आकर पुत्र पत्नी के साथ सीताराम
त्रिपाठी ने अपनी कुटिया बनायी ।

यत्रत्य नारीजनजन्यजन्य स्फुरत्कृपाणोद्धतवन्यवहनी ।

दन्वह्यमानास्तृणवत् सपत्नाः सख्यं ययुभूतपतेविभूतेः ॥९१॥

शिवा-अन्वयः—यत्रत्य नारीजनजन्यजन्य स्फुरत्कृपाणोद्धतवन्य
वहनी, तृणवत् दन्वह्यमाना सपत्नाः भूतपते विभूतेः सख्यं ययुः ।

भावार्थः—जिस जासी की नारीजनो के संग्राम में चमकती हुई
कटारों से निकले दावानल में सूखे तृणों की भाँति जलते हुए अंग्रेज शत्रु
भूतपति भगवान् शंकर की भृत्य सहय का सहय प्राप्त कर लिया अर्थात् स्वयं
भस्म हो गये ।

यत्रत्य लोकैः परिगीयमानाः जांसीश्वरी मणित युद्धलक्ष्मीः ।

अद्यापि लक्ष्मी हृदि कातराणामोजस्विभावं प्रगुणी करोति ॥९२॥

शिवा-अन्वयः—यत्रत्य लोकैः परिगीयमाना मणित युद्धलक्ष्मी

ज्ञासीश्वरी लक्ष्मीः अद्यापि कातराणाम् हृदि ओजस्त्वभावम् प्रगुणो-
करोति ।

भावार्थ—जिस ज्ञासी के लोगों द्वारा प्रेम से गाई जाती है (बुद्धेलों
हर बोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी । खब लड़ी मर्दानी वह तो
ज्ञासी वाली रानी थी ॥) युद्ध की शोभा को सुरोभित करने वाली ज्ञासी
की महारानी लक्ष्मीवाई आज भी संग्राम भीरु कावरों के हृदय में स्मरण
मात्र से ओजस्त्वता को बढ़ा रही है ।

यत्रत्य योषा रिपुरक्त पानसङ्कूलप सङ्कूलित चित्तवृत्तिः ।

दुर्गोपमा प्रोज्जितसौकुमार्या रेजे कृपाणि स्वसखीं विद्याय ॥६३॥

शिवा-अन्वयः—यत्रत्य योषा रिपुरक्तपानसंकल्पसंकल्पितचित्त-
वृत्ति दुर्गोपमा प्रोज्जितसौकुमार्या कृपाणिम् स्वसखीं विद्याय रेजे ।

भावार्थ—जहाँ की महिला रत्न महारानी लक्ष्मीवाई हठ संकल्प
लिए हुये भगवती दुर्गा के समान अपने नारीजनोंचित सौकुमार्य को छोड़
कर कटारी को ही अपनी सखी बनाकर सुरोभित हुई थीं ।

तत्रैव कृत्वा किल भूत्यकार्यं स्वत्पेन विप्रो निजवेतनेन ।

अपीपलत् स्वीयसुतान् स भार्यान् कर्तव्यनिष्ठः स कथं कथित्वच्च ॥६४॥

शिवा-अन्वयः—कर्तव्यनिष्ठः विप्रः तत्रैव भूत्यकार्यम् कृत्वा स्व-
त्पेन निजवेतनेन सभार्यान् स्वीयसुतान् कथम् कथित्वच्च अपीपलत् ।

भावार्थ—उसी भावरा नामक नाँव में एक सामान्य नौकरी करके
कर्तव्यनिष्ठ द्राह्यण सीताराम त्रिपाठी से अपने अत्यन्त अल्प वेतन से
येन केन प्रकारेण अपनी पत्नी जगरानी के सहित अपने पुत्रों का भी पालन
किया ।

एवं यथा लवधधनेन विप्रः सर्वान् सुखं पोषयति स्म तुष्टः ।

कुटीरमध्येन्द्रगृहायमाणं मत्वा मुकुन्दादिग्रसरोजभूजः ॥६५॥

शिवा-अन्वयः—मुकुन्दादिग्रसरोजभूजः विप्रः कुटीरम् अपि ऐन्द्र-
गृहायमाणम् मत्वा तुष्टः यथा लवधधनेन एवम् सर्वान् सुखम् पोषयति
स्म ।

भावार्थ—इस प्रकार भव-वन्धन से मुक्ति देने वाले भगवान् मुकुन्द
श्रीराघवेन्द्र के श्रीवरण कमल के भ्रमर वे सीताराम त्रिपाठी अपनी
कुटी को भी इन्द्र भवन मानकर परम सन्तुष्ट हुए तथा सहजता से प्राप्त

शुद्ध जन से सम्पूर्ण वरियार का सुखपूर्वक पालन-गोपण करने लगे ।

अहो विधातभवता कृतोऽयं कियाक्षिरीहो ह्यधनस्वभावः ।
ये केवलं तोयमुपेत्य सायं हत्वा बुभुक्षां सुखिनः स्वपन्ति ॥६६॥

शिवा-अन्वयः—अहो विधातः भवताभगम् हित अधनस्वभावः
कियानिरीहः कृतः ये सायम् केवलम् तोयम् उपेत्य बुभुक्षाम् हत्वा
सुखिनः स्वपन्ति ।

भावार्थ—अरे विधाता आपने धनहीन व्यवित का स्वभाव कितना
निरोह बना दिया, जो दरिद्र लोग शाम को दिन भर में एक बार मात्र
जल पीकर अपनी भूख को मारकर सुखपूर्वक सो जाते हैं ।

हा धिग् ! जघन्यां जगतीव्यवस्थां वैषम्यपूर्णां कलितातिकट्टाम् ।

ववचित्सदुर्धोदनभुव्यरोऽसौ कन्दन्ति बालाः पश्यते ववचित्च्च ॥६७॥

शिवा-अन्वयः—हा वैषम्यपूर्णाम् कलिताति कट्टाम् जघन्याम्
जगतीव्यवस्थाम् धिक् ववचित् असौ खरः सदुर्धोदनभुक् च ववचित्
बालाः पश्यते कन्दन्ति ।

भावार्थ—हाय नाना दुःखों से भरी हुई विषमता पूर्ण अत्यन्त नीच
इस पृथ्वी लोक की व्यवस्था को धिक्कार है । कहीं पर तो गधे को दूध-
भात मिल रहा है और कहीं वच्चे दूध के लिए तरस रहे हैं ।

एकत्र भूत्यैः परिसेध्यमानाः सुभोजनाः कौसुमतल्पभाजः ।

हम्येषु सौरेन्द्रगृहोपमेषु सानन्दचित्ता धनिका रमन्ते ॥६८॥

शिवा-अन्वयः—एकत्र भूत्यैः परिसेध्यमानाः सुभोजनाः कौसुम-
तल्पभाजः सौरेन्द्रगृहोपमेषु हम्येषु सानन्दचित्ता धनिकाः रमन्ते ।

भावार्थ—एक ओर अनेक नौकर चाकरों से सेवित होते हुए सुन्दर
भोजन तथा पुष्पों के पलंग पर बैठे हुए इन्द्र के भवन जैसे अपने सुन्दर
महल में धनिक लोग आनन्द पूर्वक रमण करर हैं हैं ।

अन्यत्र वर्षोदकपर्णधामिन् प्रकम्पितास्तीक्रसमीरवेगात् ।

कूमरियमाणाः कृतदन्तशब्दाः सीदन्ति बालाः अपि शीतरात्रौ ॥६९॥

शिवा-अन्वयः—अन्यत्र शीतरात्री वर्षोदकपर्णधामिन् तीव्रसमीर-
वेगात् प्रकम्पिताः कूमरियमाणाः वृतदन्तशब्दाः बालाः अपि सीदन्ति ।

भावार्थ—दूसरी ओर जिसमें वर्षाकाल की प्रत्येक जल की बृंद

गिरते गिरते भर जाती है ऐसी धास फूस से बनी हुई झोपड़ी में कठोर बायु के बेग से अत्यन्त काँपते हए सर्दी के कारण दौत कटकटाते हुए छोटे-छोटे बालक भी करान शीत लहर की चपेट में आकर अपने प्राण त्याग देते हैं ।

क्षुत्क्षामकण्ठोऽबलगात्रयित्स्तथा समाशोषितपल्लबौद्धः ।
विमान्यमानो जगतीजनेन कथं दरिद्रो विहितो विधात्रा ॥१००॥

शिवा-अन्वयः—क्षुत्क्षामकण्ठः अबलगात्रयित्स्तथा समाशोषितपल्लबौद्धः जगतीजनेन विमान्यमानः दरिद्रः विधात्रा कथम् विहितः ।

भावार्थ—जिसका कण्ठ भूख से सूख गया है एवं शरीर निर्बल तथा यष्टिका के समान दुर्बल हो चुका है ध्वास से जिसका पल्लव सदृश ओंठ सूख गया है ऐसा संसार के लोगों द्वारा अपमानित किया जाता हुआ वह दरिद्र विधाता के द्वारा वयों बनाया गया ।

तथापि धन्यास्ति दरिद्रतेऽप्यं या सर्वदा द्रव्यमदाद्विमुक्ता ।
स्वप्नेऽपि यां सर्ववधूः प्रतिष्ठादंष्टुः स्वकीयैदंशनैर्नशेके ॥१०१॥

शिवा-अन्वयः—तथापि इयम् दरिद्रता धन्या अस्ति या सर्वदा द्रव्यमदाद् विमुक्ता स्वप्नेऽपि यां प्रतिष्ठासर्पवधूः स्वकीयैः दशनैः दंष्टुम् न शेके ।

भावार्थ—फिर भी यह दरिद्रता धन्य है जो निरन्तर धन के मद से दूर रहती है । जिसको स्वप्न में भी प्रतिष्ठास्तिष्ठी सांपिन दौतों से न डस सकी ।

दरिद्रते त्वं बहुलाभपूर्णा,
मुर्धेव मूढा भवतीं क्षिपन्ति ।
यस्यां जनास्त्यक्तसमस्ततृणाः,
प्रेमणा मुकुन्दाडिग्रं युगं स्मरन्ति ॥१०२॥

शिवा-अन्वयः—हे दरिद्रते त्वं बहुलाभपूर्णा । मूढा: एव मुधा भवतीम् क्षिपन्ति यस्याम् (त्वयि) जनाः त्यक्त समस्ततृणाः प्रेमणा मुकुन्दा डिग्रंयुगम् स्मरन्ति ।

भावार्थ—हे दरिद्रते ! तुम अनन्त लाभों से पूर्ण हो । मूढ जन ही आपकी व्यर्थ निन्दा करते हैं । जिस दरिद्रता के आने पर लोग समस्त तृणायें छोड़कर प्रेमपूर्वक भगवान् मुकुन्द के श्रीयुगल चरणकमल का

स्मरण करते हैं वह कैसे निन्दित हो सकती हैं ।

पाद टिप्पणी—मुकुन्दाडिग्रयुगं मुः मुक्तिः कुः पृथ्वी पर्याय-वाचित्वात् भुक्तिः मुश्च कुश इति मुक् ते ददाति यति वा इति मुकुन्दः अथवा मोचनं कर्मवत्त्वतात् इति मुकं मान्तमव्ययम् तं यति वा इति मुकुन्दः अथवा मोः मुक्ते कुः पृथ्वी आधारभूता तां मोक्षाधारभूतां मुकुम् भक्तिं ददाति इति मुकुन्दः अथवा मुः मुखं तस्मिन् कुन्दा इव दन्ता अस्य स मुकुन्दः तस्य अंध्योः चरणयोः युगं दृश्यम् इति मुकुन्दाडिग्रयुगम् ।

इत्थं विचित्तयोजिज्ञतदेन्यशोकः, पुण्णन् कुटुम्बे निजधर्मवृत्या ।

सुतेन चित्ते शशिशेखरेण, तुतोष चन्द्रेण यथा चकोरः ॥१०३॥

शिवा-अन्वयः—इत्थम् विचित्तय उज्जितदेन्यशोकः (सीताराम विपाठी) निजधर्ममृत्या कुटुम्बम् पुण्णन् चन्द्रेण चकोरः यथा शशिशेखरेण सुतेन चित्ते तुतोष ।

भावार्थ—इस प्रकार विचारकर देन्य एवं शोक को छोड़कर अपनी धार्मिक जीविका से कुटुम्ब का पालन करते हुए पुत्र चन्द्रशेखर से उसी प्रकार प्रसन्न हुए जैसे चन्द्रमा से चकोर सन्तुष्ट हो जाता है ।

कदाचिद्बालोक्य तिजं कुटुम्बं प्लुष्टं कुदारिद्र्यदवानलेन ।

उग्राधिपत्यं खलदास्यदस्योरुद्विग्नचित्तः स बभूवबालः ॥१०४॥

शिवा-अन्वयः—कदाचित् स बालः कुदारिद्र्य दवानलेन प्लुष्टम् आलोक्य च खलदास्यदस्योः उग्राधिपत्यम् आलोक्य उद्विग्नचित्तः बभूव ।

भावार्थ—किसी सभव बालक चन्द्रशेखर ने दुष्ट दरिद्रता रूप वावग्नि से अपने कुटुम्ब को झुलसा हुआ देखकर तथा अंग्रेज शासकों के दास्यरूप दस्तु अर्थात् लुटेरे का उग्र आधिपत्य देखकर मन में बहुत उद्विग्नता का अनुभव किया ।

कि साम्रतं कार्यमिदं कुटुम्बं,
यथा चिरं स्थाद् विषदी विमुक्तम् ।
धिक्तं महीभारमिवाप्तदेहं,
यस्मिन् न जाते स्वजनः सुखी चेत् ॥१०५॥

शिवा-अन्वयः—साम्रतम् (मया किम् कार्यम्) यथा इदम् कुटुम्बम्

अविरम् विषदा विमुक्तम् स्यात् यस्मिन् जाते स्वजनः न सुखी चेत्तम्
महीभारम् इव आप्तदेहम् धिक् ।

भावार्थ—अब बालक चन्द्रशेखर मन में विचार करने लगे कि इस समय मुझे क्या करना चाहिए कि जिससे मेरा यह परिवार जीव ही विपति से छूट जाय जिस व्यक्ति के जन्म लेने से उसका परिवार सुखी नहीं हुआ, उस पृथ्वी के भारस्वरूप देहधारी मनुष्य को धिकार है ।

अथार्थकाश्यदितिविमनचित्तः सदा समद्वान् नगरीं मनोज्ञाम् ।

बेलोपमूढां पितुरिन्दिरायाः अमूढधीर्भाहमयीं जगाम ॥१०६॥

शिवा-अन्वयः—अथ अर्थकाश्यात् अतिविमनचित्तः इन्दिरायाः पितुः बेलोपगूढाम् सदा समद्वाम् मनोज्ञाम् मोहमयीम् नगरीम् अमूढधीः सन् जगाम ।

भावार्थ—इसके अनन्तर धनाभाव के कारण मन में अत्यन्त उद्गिन होकर बालक चन्द्रशेखर इन्दिरा अर्थात् लक्ष्मी के पिता समुद्र की बेला (चौपाटी) सामुद्रिक स्थली से सुसज्जित सदैव धन-धान्य पूर्ण अत्यन्त सुन्दर मोहमयी याने मुम्बई नामक नगरी में मोहासक्त न होकर भी परिवारिक संकट टालने के लिए गये ।

पाद-टिप्पणी—इन्दिरायाः 'इन्दिरा लोकमाता मा शीरोदतनया रमा' इत्यमरः ।

तत्रैव वृत्तिं प्रविधाय काञ्चित् नीत्वाथ कालं विषमां व्यवस्थाम् ।
निरीक्ष्य योगीव स मोहमय्यास्ततो न्यवर्तिष्ट निवृत्तमोहः ॥१०७॥

शिवा-अन्वयः—सः तत्रैव काञ्चित् वृत्तिम् प्रविधाय काञ्चित् कालम् नीत्वा अथ विषमाम् व्यवस्थाम् निरीक्ष्य योगी इव निवृत्तमोहः ततः मोहमय्याः न्यवर्तिष्ट ।

भावार्थ—वहाँ पर अति सामान्य सेवा करके कुछ काल विताकर वहाँ की व्यवस्था में अंग्रेजों द्वारा किये गये इवेत अश्वेतों के बीच भेद-भाव देखकर योगी की भाँति मोह से नियृत होकर बालक चन्द्रशेखर उस मोहमयी अर्थात् मुम्बई से लौट आये ।

आनेतुकामः परतन्त्रदेशे व्यवस्थाम् कान्तिवलेन वीरः ।

स्वतन्त्रभाषामधिगन्तुमिच्छुगर्विषदार्णों सजगाम काशीम् ॥१०८॥

शिवा-अन्वयः—परतन्त्रदेशम् कान्तिवलेन स्वतन्त्रताम् आनेतु-

कामः ग वीरः रदतन्त्रभाषामृगीवं णाणीम् अधिगत्युम् इच्छान् याशीम् जगाम ।

भावार्थ—इस परतन्त्र भारत में आन्ति के बल से स्वतन्त्रता को लाने वी कामना करते हुए वीर चन्द्रशेखर अपनी स्वतन्त्र भाषा देववाणी संस्कृत को अध्ययन करने की इच्छा करते हुए काशी चले गये ।

स ज्ञानवापीसलिलाभिषेको विशुद्धबुद्धिवृत्तमौञ्जसूत्रः ।

सानन्दमानन्दवने गुरुभ्यः श्रीदेवभाषामपठन् मनस्वी ॥१०६॥

शिवा-अन्वयः—ज्ञानवापी सलिलाभिषेकविशुद्धबुद्धिः धृतमौञ्जसूत्रः सः (चन्द्रशेखरः) मनस्वी आनन्दवने सानन्दम् गुरुभ्यः श्रीदेवभाषाम् अपठत् ।

भावार्थ—ज्ञानवापी के जलके अभिषेक से बालक चन्द्रशेखर की बुद्धि अत्यन्त चुद हो गयी और उस मनस्वी विद्यार्थी ने आनन्दपूर्वक काशी में निवास करते हुए गुरुजन से देवभाषा संस्कृत बोलने के नियमों को जानना प्रारम्भ किया ।

पाद-टिप्पणी—आनन्दवने काशी का ही आनन्दवन नाम है ।

वाराणसेयान् बहुदेशभक्तान् श्रुत्वा स्वदेशार्थसमुज्जितासून् ।

स्थानुं न ज्ञेकेऽचलचेतसाऽपि समीरसंक्षुद्धपयोधिनेव ॥१०८॥

शिवा-अन्वयः—वाराणसेयान् बहुदेशभक्तान् स्वदेशार्थ समुज्जितासून् श्रुत्वा अचलचेतसाऽपि (चन्द्रशेखरेण) समीरसंक्षुद्धपयोधिना इव स्थानुम् न ज्ञेके ।

भावार्थ—वाराणसी के बहुतेरे देशभक्त भारतभूमि की रक्षा के लिये अपने प्राणों का वलिदान कर चुके थे । यह समाचार सुनकर बालक चन्द्रशेखर मुस्तिर चित वाले होकर भी उसी प्रकार शान्त स्थिति में नहीं रह सके जैसे तूफान के आने पर समुद्र अपने तटों को तोड़कर विकराल हो जाता है ।

पाद टिप्पणी—बहुदेशभक्तान्-यहाँ बहु पट् इत्यादि प्रयोगों की भाँति 'विभाषा सुपः पुरस्तात् बहुच्' इस पाणिनीय सूत्र से कुत्सित अर्थ में बहुच् प्रत्यय नहीं है अपितु बहुवर्षसहस्र् इत्यादि प्रयोगों की भाँति बहु शब्द सुबन्त होकर विशेषण है । बहुवर्ष ते देशभक्ताः इति बहुदेशभक्ताः-तान् बहुदेशभक्तान् ।

स जाहनवीपुण्यपयो निपीय,
ध्यात्वा गिरीशस्य च रौद्ररूपम् ।
उद्धर्तुमेतान् निजभारतीयान्,
क्रान्तिं विद्यातुं कृतवान् प्रतिज्ञाम् ॥१११॥

शिवा-अन्वय—सः जाहनवीपुण्यपयः निपीय च गिरीशस्य रौद्ररूपम् ध्यात्वा एतान् भारतीयान् उद्धर्तुम् क्रान्तिं विद्यातुम् प्रतिज्ञाम् कृतवान् ।

भावार्थ—विद्यार्थी चन्द्रशेखर ने श्री गङ्गा जी के पवित्र जल का आचमन करके भगवान् शंकर के उग्र रूप का ध्यान किया, तथा परतन्त्र भारतवासियों का उद्धार करने के लिए अंगेजों के साथ क्रान्ति करने की निश्चयपूर्वक प्रतिज्ञा करली ।

स त्यक्तशास्त्रीयसमस्तचर्चः, स्वातन्त्र्ययज्ञस्य वरेष्यहोतर ।

त्रयोदशाब्दस्त्रिवशप्रताप आहूय बालान् हरिवज्जगर्ज ॥११२॥

शिवा-अन्वय—सः त्रयोदशाब्दः विद्यशप्रतापः स्वातन्त्र्ययज्ञस्य वरेष्यहोतर त्यक्तशास्त्रीयसमस्तचर्चः बालान् आहूय हरिवत् जगर्ज ।

भावार्थ—त्रयोदशवर्धीय बालक चन्द्रशेखर देवतुल्य प्रभाव सम्पन्न थे । वे स्वतन्त्रतारूप महायज्ञ के श्रेष्ठ होता थे । अब समस्त शास्त्रीय चर्चाओं को छोड़कर एक दिन सभी समवयस्क बालकों को बुलाकर उन्होंने सिंह से समान गजंना की ।

क्लैव्यं त्यजन्त्वाशु समे सखायो भवन्तु राष्ट्राय समुद्यताश्च ।

धिक् जीवनं नो जननी यदीया हस्ते गता सीदति वैरिणां वै ॥११३॥

शिवा-अन्वय—समे सखायोः आशु क्लैव्यम् त्यजन्तु च राष्ट्राय समुचिता भवन्तु नः जीवनम् धिक् वै यदीया जननी वैरिणाम् हस्ते गता सीदति ।

भावार्थ—बीर चन्द्रशेखर ने कहा है मेरे मित्रो ! अब आप सब नपुंसकता छोड़ दो और राष्ट्र के लिए पूर्ण रूप से तैयार हो जाओ । अरे ! हम लोगों के जीवन को निश्चित ही धिकार है कि जिनकी मातृतुल्य भारतमाता शत्रुओं के हाथ में पड़ी हुई दुःख उठा रही है ।

शत्रुद्विषो वह्निसमाः भवन्तु, क्रान्त्या समाक्रम्य विसृष्टशंकाः ।
गौराङ्गमस्तद्विपसिंहसत्वाः, कुर्वन्तु देशं सपदि स्वतन्त्रम् ॥११४॥

शिवा-अन्वय—गौराङ्गमस्तद्विपसिंहसत्वाः शत्रुद्विषो वह्निसमा भवन्तु विसृष्टशंकाः क्रान्त्या समाक्रम्य देशम् सपदि स्वतन्त्रं कुर्वन्तु ।

भावार्थ—चन्द्रशेखर ने उत्साहित करते हुए कहा—हे अंगेज रूप मम गजेन्द्रों को कुचलने के लिए सिंह के समान पराक्रमी बीर बालको ! आप लोग अग्नि के समान शत्रुओं को जलाने वाले बनें तथा किसी भी प्रकार की शंका न करके क्रान्ति से आक्रमण करके अति शीघ्र देश को स्वतन्त्र करें ।

इत्यं समुत्साह्य दुरन्तवीर्यो, बालान् समुत्पादितवीरभावान् ।

क्रान्त्या चिराच्छत्रसरोरुहाणां हिमो यथा दाहकरो बभूव ॥११५॥

शिवा-अन्वय—इत्यम् समुत्पादित बीर भावान् बालान् समुत्साह्य दुरन्त वीर्यः अचिरात् क्रान्त्या शत्रु सरोरुहाणाम् हिमो यथा दाहकरः बभूव ।

भावार्थ—इस प्रकार बालकों के मन में बीरभाव को जाग्रत कर उन्हें पूर्णतया उत्साहित किया अदम्य पराक्रमी बाल चन्द्रशेखर क्रान्ति के द्वारा शत्रुरूप कमलों के लिए हेमन्त ऋतु के समान दाहकारक हो गये ।

अथात्मनः क्रान्तिवलेन धीरः समुद्य चर्चनि ऋतुसंगरोऽसौ ।

आन्दोलयामास सपत्नसैन्यं, यथा समीरो व्रततीः क्षणेन ॥११६॥

शिवा-अन्वय—अथ यथा समीरः क्षणेन व्रततीः (आन्दोलयति) तथा ऋतुसंगरः असौ बालान् समुद्य भात्मनः क्रान्तिवलेन सपत्नसैन्यं आन्दोलयामास ।

भावार्थ—इसके अनन्तर जिस प्रकार बायु एक क्षण में लताओं को झकझोर देता है उसी प्रकार सत्यप्रतिज्ञ इस धीर बालक चन्द्रशेखर ने वाराणसी के सम्पूर्ण बालकों का संगठन करके क्षणमात्र में अंगेजों की सेना को आन्दोलित कर दिया ।

ततो विरोधं प्रसमीक्ष्य तेषां, काशीस्थविद्यार्थिमृगेन्द्रकाणाम् ।

प्रशासनेनोत्थितकोपकेन, दण्डं प्रचण्डं समघोषि तेषु ॥११७॥

शिवा-अन्वय—ततः तेषाम् काशीस्थविद्यार्थिमृगेन्द्रकाणाम् विरोधम् प्रसमीक्ष्य उत्थितकोपकेन प्रशासनेन तेषु प्रचण्ड दण्डम् समघोषि ।

भावार्थ—इसके अनन्तर वाराणसीवासी विद्यार्थी सिंहशावकों

का धोर विरोध देखकर अत्यन्त कुदू जिला। प्रशासन द्वारा उन पर प्रचण्ड दण्ड की घोषणा की गयी।

स्वदेशभक्तान् नरसिंहकल्पान् विद्यार्थिनस्तान् दमयन् भयेन।
कारागृहाध्यक्षपदे नियुक्तः, आज्ञापयद् वेत्रलताप्रहारम् ॥११८॥

शिवा-अन्वयः—स्वदेशभक्तान् नरसिंहकल्पान् तान् विद्यार्थिनः भयेन दमयन् कारागृहाध्यक्षपदे नियुक्तः वेत्रलताप्रहारम् आज्ञापयत्।

भावार्थ—अपने देश के प्रति दृढ़भक्ति रखने वाले नृसिंह के समान निर्भीक उन विद्यार्थी वालकों का दण्डनीति से दमन करते हुए कारागृहाध्यक्ष पद पर नियुक्त दण्डाधिकारी ने उन छोटे-छोटे बच्चों पर वेत लगाने की सजा दे दी।

येषां शरीराणि सुकोमलानि, पुष्पं भ्रदिम्ना स्म विडम्बयन्ति ।
तानेव हा ताडयितुं स पापः वेत्रैःप्रचण्डैर्भृशमादिदेश ॥११९॥

शिवा-अन्वयः—हा येषाम् सुकोमलानिशरीराणि भ्रदिम्ना पुष्पम् विडम्बयन्ति स्म तान् एव प्रचण्डैः वेत्रैः भ्रशम् ताडयितुम् सः पापः आदिदेश ।

भावार्थ—अहो कष्ट है। जिन वालकों के सुकोमल शरीर अपनी मृदुलता से पुष्प को भी लज्जित करते थे, उन्होंने मुन्ने वालकों को प्रचण्ड बेटों से पीटने के लिए पापी दण्डाधिकारी ने आदेश दे दिया।

सदगृहवक्त्रो जनतापकारी, लालाटिकः शात्रवशासनस्य ।
आहूय सर्वान् चिछुदेशभक्तानतीतडूँ पशुवच्च वेत्रैः ॥१२०॥

शिवा-अन्वयः—जनता पकारी शात्रवशासनस्य लालाटिकः दग्ध वक्त्रः सः सर्वान् शिशुदेशभक्तान् आहूय वेत्रैः पशुवत् अतीतडूँ ।

भावार्थ—जनता का अपकार करने वाला एवं अंग्रेज शासन का चाटुकार वह जलमूर्हा दण्डाधिकारी सभी देशभक्त वालकों को बुलाकर पशु की झाँति उन्हें बेटों से पिटवाने लगा।

न सेहिरे केचिद् धीरवाला
वेत्र प्रहारान् सुरपास्त्रकल्पान् ।
क्रन्दन्त उच्चैरतिदीनदीनं,
मृत्योभ्यात् क्रान्तिपथाद्विचेलुः ॥१२१॥

शिवा-अन्वयः—केचिद् धीरवाला सुरपास्त्रकल्पान् वेत्रप्रहारान्

न सेहिरे अतिदीनदीनं उच्चैः क्रन्दन्त मृत्योभ्यात् (हेतो) क्रान्तिपथात् विचेलुः ।

भावार्थ—उनमें से कुछ ऐसे अधीर वालक थे जो इन्ह के वज्र के समान अत्यन्त कठोर वेत्र के प्रहारों को नहीं सह पाये और वे अत्यन्त दीनता पूर्वक जोर-जोर से चिल्लाते हुए मृत्युभय के कारण क्रान्तिपथ से विचलित हो गये।

अनेन सर्वे शिशादः प्रयुक्ताः क्रान्त्ये कृताणा अयमेव तस्मात् ।
दण्ड क्रिमस्येति विनिर्णयाय नीतोनरंन्यायिगृहं स बालः ॥१२२॥

शिवा-अन्वयः—सर्वे शिशादः क्रान्त्ये अनेन प्रयुक्ता तस्मात् अयम् एव कृताणा अस्य क्रिम् दण्डम् इति निर्णयाय स बालः नरः न्यायगृहम् नीतः ।

भावार्थ—इसी वालक ने सभी बच्चों को क्रान्ति के लिए प्रेरित किया है। इसलिए सबसे बड़ा अपराधी यही है। इसका नया दंड हो सकता है इस निर्णय के लिए पुलिस चन्द्रशेखर को न्यायालय में ले आयी।

दण्डाधिकारी प्रभया प्रभान्तं
निर्भीकमुद्रं शशिशेखरं तम् ।
आलोक्य संकोचितनासिकाश्च
रपृच्छदारकतमुखोऽति कोपात् ॥१२३॥

शिवा-अन्वयः—दण्डाधिकारी प्रभया प्रभान्तम् निर्भीकमुद्रम् शशि शेखरम् आलोक्य संकोचितनासिकाश्चः अतिकोपात् आरक्तमुखः अपृच्छत् ।

भावार्थ—दण्डाधिकारी ने स्वाभाविक प्रभा से प्रकाशित होते हुए अत्यन्त निर्भीक मुद्रा में उपस्थित वालक चन्द्रशेखर को देखकर नाक-भौंहे सिकोड़ लीं तथा अत्यन्त क्रोध के कारण उसका मुख लाल हो गया और उसने चन्द्रशेखर से प्रश्न किया।

वव ते गृहं का च तवास्ति माता,
कस्ते पिता कि च तवाभिधानम् ।
के ते सहायाः व्यसनञ्च किन्ते,
क्रान्ती किमिच्छन् समझूप्रवृत्तः ॥१२४॥

शिवा-अन्वयः—ते मृहम् वव, च तव माता का, ते पिता कः, न ता

अभिदानम् किम्, ते सहाया: च के, ते व्यसनम् किम् । किम् इच्छन् क्रान्ती प्रवृत्तः सम्भूः ।

भावार्थ—दण्डाधिकारी ने चन्द्रशेखर से पुछा-बालक तेरा घर कहाँ है? और तेरी माँ कौन है? तेरा पिता कौन है? और तेरा नाम क्या है? और तेरे सहायक कौन हैं? और तेरा व्यसन क्या है? तुम किस इच्छा से क्रान्ति में प्रवृत्त हुए हो?

इत्थं निशम्याथ वचस्तदीयं, निर्भीकिवालः समुवाच भूयः ।

आरक्षत्कुलाम्बुजसमिताक्षो, विभीषयन् गौरगणान् गिरेव ॥१२२॥

शिवा-अन्वयः—अथ इत्थं तदीयं वचः निशम्य आरक्षत्कुलाम्बुज समिताक्षः निर्भीकिवालः गिरा गौरगणान् विभीषयन् इव भूयः समुवाच ।

भावार्थ—इस प्रकार दण्डाधिकारी के बचन सुनकर अरुण विकृत कमल के समान नेत्र बाले निर्भीक मुद्रा में अपनी बाणी से अंग्रेजों को भयभीत करते हुए से बालक चन्द्रशेखर फिर बोले ।

कारा मेऽस्ति गृहं च भारतमही माता मनोज्ञा मम,

श्रीरामोऽस्ति पिता समद्भ्यजरिपून्नाजाद नामास्म्यतः ।

त्वन्नाशो व्यसनं खलोद्धृतिरतौ बाहू सहायीकृतौ ।

क्रान्तिनर्त्तविनिमित्सुकरहरहो युध्माभिराकल्पिता ॥१२६॥

शिवा-अन्वयः—कारा मे गृहम् अस्ति मनोज्ञा भारत मही मममाता श्रीरामः पिताअस्ति अजरिपून् समद्भि अतः आजादनामा अस्मि त्वन्नाशः व्यसनम् खलोद्धृतिरतौ बाहू (मम) सहायीकृतौ स्वावनि मृहप्युक्तः युध्माभिः (सह) क्रान्ति आकल्पिता ।

भावार्थ—बालक चन्द्रशेखर ने उत्तर दिया—कारागार ही मेरा घर है भारत भूमि ही मेरी सुन्दर माँ है, सर्वतन्त्र स्वतन्त्र श्रीराम ही मेरे पिता हैं, बकरों के समान भारतीय संस्कृतिरूप फसल को हानि पहुँचाने वाले जंतुओं को मैं खा जाता हूँ इसीलिए मेरा नाम आजाद है। तुम्हारा नाश ही मेरा व्यसन है। दुष्ट अंग्रेजों को उखाड़ फेंकने में तत्पर मेरे दोनों भुजदण्ड ही सहायक हैं और हमारी भारत-भूमि को चाहने वाले तुम जैसे विदेशी जासकों के साथ ही मेरी दिनरात की क्रान्ति है।

पाद टिप्पणी—आजादः—अजा इव रिपवः तान् अजान् अति इति अजादः। अजादः एव आजादः।

अत्युद्गतं वीक्ष्य विवृद्धमन्युः क्रान्त्यग्रदृतं विद्युशेखरं तम् ।

स पापको हा दशपञ्चकृत्वो वेत्रैः प्रहृतुं विषम समाख्यत् ॥१२७॥

शिवा-अन्वयः—क्रान्त्यग्रदृतम् विद्युशेखरम् तम् अत्युद्गतम् वीक्ष्य विवृद्धमन्युः स पापकः दशपञ्चकृत्वः वेत्रैः प्रहृतुम् विषमम् समाख्यत् हा ।

भावार्थ—क्रान्ति के अग्रदृत उन आजाद चन्द्रशेखर को अत्यन्त उद्गत देखकर त्रोध में भरे उस पापी दण्डाधिकारी ने उन्हें पन्द्रह बेत लगाने की कठोर सजा सुनाई ।

आदेशमाकर्षं जनाः समस्ताः शोकाम्बुराशी नितरां ममज्जुः ।

भटास्तमादाय शिशुप्रवीरं कारागृहाधीशमयोपनिन्युः ॥१२८॥

शिवा-अन्वयः—आदेशं आकर्षं समस्ताः जनाः शोकाम्बुराशी नितराम् ममज्जुः अथ भटाः तम् शिशुप्रवीरम् आदाय कारागृहाधीशं उपनिन्युः ।

भावार्थ—चन्द्रशेखर को पन्द्रह बेत लगाने की सजा सुनकर वाहर खड़े लोग शोक सागर में डूब गये। इसके पश्चात् राजपुरुष (पुलिस) उस वीर बालक को पकड़कर कारागृहाधीश अर्थात् जेलर के पास लाये ।

अहो दुरन्ताऽच्च परिस्थिति तां स्मृत्वा विदीर्णा वसुधा कथं तो ।

निर्दोषं बालं च यदा प्रहृतुं प्रसहा पापा निगडेवबन्धुः ॥१२९॥

शिवा-अन्वयः—यदा पापा प्रसहा प्रहृते निर्दोष बालं निगडः बबन्धुः अहो ताम् दुरन्ताम् परिस्थितिम् स्मृत्वा वसुधा कथम् तो विदीर्णा (वसुव) ।

भावार्थ—जब इन पापियों ने बलपूर्वक उस निर्दोष बालक को पीटने के लिए सिकड़ियों से बांधा। तब उस दुरन्त परिस्थिति को स्मरण करके पृथ्वी क्ष्यों नहीं फट गयी।

ततो दयाशून्यहृदाधमेन, काराधिपेनानुचरोऽनुदिष्टः ।

प्रारब्धवान् दारणवेत्रयष्ट्या, कोपातप्रहृतुं तमनन्तर्धैर्यम् ॥१३०॥

शिवा-अन्वयः—ततः दयाशून्यहृदा अधमेन काराधिपेन अनुदिष्टः अनुचरः दारणवेत्रयष्ट्या, अनन्तर्धैर्यम् तम् प्रहृतुम् प्रारब्धवान् ।

भावार्थ—इसके आमन्तर निर्दय हृदय बाले उस दुष्ट काराध्यक्ष के आदेश से वहाँ के अनुचर ने कठोर बेत की छड़ी से फोधपूर्वक उस असीम धैर्यशाली बालक को पीटना प्रारम्भ कर दिया।

यदा-यदा वेत्रलता प्रहारं तस्मिन् सकोपोऽनुचरश्चकार ।
तदा तदा सिंहरवेण वीरो जगं बालो जय भारतेति ॥१३१॥

शिवा-अन्वयः—यदा-यदा सकोपः अनुचरः तस्मिन् वेत्रलता प्रहारम् चकार तदा वीरः बालः सिंहरवेण जय भारत इति जगं ।

भावार्थ—जय-जय कोध में भरा हुआ कारागृह का अनुचर चन्द्र-शेखर पर बेत का प्रहार करता तद-तद वीर बालक सिंह के समान ऊंचे स्वर से 'जय भारत' कहकर गरज पड़ता था ।

जयन्त्वमी भारतसिंहयोद्धाः, क्रान्तिशिया वैरिवधप्रवीणाः ।

जयन्तु भक्तप्रमुखाः सुशीला कालोऽपि नो भीषयितुं न शक्यः ॥१३२॥

शिवा-अन्वयः—क्रान्तिप्रियाः वैरिवधप्रवीणाः, अमी भारतसिंहयोद्धाः जयन्तु, भक्तप्रमुखाः सुशीला: जयन्तु, कालः अपि नः भीषयितुम् न शक्यः ।

भावार्थः—क्रान्तिप्रिय एवं शत्रु वध में निपुण ये क्रान्तिकारी भारत के सिंह योद्धा विजयी हों और भगतसिंह आदि राष्ट्रवादियों की भी जय हो । (क्योंकि) काल भी हमें नहीं डरा सकता ।

अये खलास्तक्षत चर्म वेत्रैः, कुर्वन्तु कालं वपुरत्थशेषम् ।

व्रतं न हास्यामि कदापि वैरं जन्मान्तरे वैरिषु साधयिष्ये ॥१३३॥

शिवा-अन्वयः—अये खला वेत्रैः चर्म तक्षतकामम् वपु अस्थि शेषम् कुर्वन्तु कदापि व्रतम् न हास्यामि जन्मान्तरे वैरिषु वैरं साधयिष्ये ।

भावार्थः—अरे दुष्टो ! बैत से चाहे चमड़ी उध्रेह लो, चाहे पूर्ण रूप से शरीर को अस्थिशेष कर डालो । फिर भी कभी अपना ज्रत नहीं छोड़ूँगा और दूसरे जन्म में भी शत्रुओं से इस बैर का बदला लूँगा ।

यावत्करिष्यामि न भूषिपासां शान्तां भृशुण्डी समुपाहृतेन ।

रक्तम्बुना वस्तनुनिर्गतेन तावत्कर्थं मे हृदयस्य शान्तिः ॥१३४॥

शिवा-अन्वयः—यावत् भृशुण्डि समुपाहृतेन वः तनु निर्गतेन वक्ताम्बुना भूषिपासां शान्ताम् न करिष्यामि तावत् मे हृदयस्य कथम् शान्तिः भविष्यतीति शेषः ।

भावार्थः—जब तक मैं तुम लोगों के शरीरों से निकले हुए भृशुण्डि अर्थात् चन्द्रक रूप पाव से अंगित किये हुए रक्त रूप जल से पृथ्वी की पिपासा को नहीं बुझा लूँगा तब तक मेरे हृदय को शान्ति कहाँ ?

प्रताङ्गमानस्य शिशोबंहिष्ठा, ओजस्विनादं चकिता निशम्य ।
हा साहसिन् हा विद्युषेष्वरेति, विचुक्रशुः पक्षिगणा इवार्ता: ॥१३५॥

शिवा-अन्वयः—प्रताङ्गमानस्य शिशोः ओजस्विनादम् निशम्य वहिष्ठाः चकिता पक्षिगणाः इवार्ता हा साहसिन् हा विद्युषेष्वर इति विचुक्रशुः ।

भावार्थः—इस प्रकार पीटे जाते हुए वीर बालक की ओजस्वी गर्जना को मुनकर बाहर छाड़े हुए लोग चकित हो गये । हा साहसी हा चन्द्रशेखर इस प्रकार आत्म पक्षिगणों की भाँति चिल्लाने लगे ।

प्रताङ्गमानः स शिशुशरीर खुतेन रक्तेन महीम् विसिच्य ।

उत्कृत्तचर्मा च विसृष्टसंज्ञः पपात भूमी प्रणिपित्सयेव ॥१३६॥

शिवा-अन्वयः—प्रताङ्गमानः सः शिशुः शरीर तेन रक्तेन महीम् विसिच्य उत्कृत्तचर्मा च विसृष्ट संज्ञः प्रणिपित्सया इव भूमी पपात ।

भावार्थः—इस प्रकार निर्ममता पूर्वक पीटा जाता हुआ बालक जिसकी चमड़ी उधड़ चूकी थी अपने शरीर से गिरते हुए रक्त ढारा पृथ्वी को सींचकर मानो प्रणाम करने की इच्छा से मूर्छित होकर भूमि पर गिर पड़ा ।

तं मूर्छितं वेत्रलताभिधातप्रलडपीडम् मृतवत् समीक्ष्य ।

स पापकस्ताडनतो व्यरंसीत् काराधिषे पश्यति कम्पमानः ॥१३७॥

शिवा-अन्वयः—वेत्रलताभिधात प्रलडपीडम् मूर्छितम् तम् मृतवत् समीक्ष्य काराधिषे पश्यति कम्पमानः स पापकः ताडनतः व्यरंसीत् ।

भावार्थ—बैतों के प्रहारों से उत्पन्न पीडा के कारण मूर्छित हुए बालक चन्द्रशेखर को भरा जैसा सभज कर काराधिष के देखते-देखते वह पापी सिपाही बैत लगाने से विरत हो गया ।

अहो शिशुः साहसिरत्नभूतो, धन्योऽस्य धन्या महती तितिक्षा ।

निवध्य वेत्रैः परिताङ्गमानस्तथापि धीरो न जहो प्रतिज्ञाम् ॥१३८॥

शिवा-अन्वयः—अहो साहसरत्नभूतः शिशुः धन्यः अस्यमहती तितिक्षा धन्या । निवध्य वेत्रैः परिताङ्गमानः तथापि धीरः प्रतिज्ञाम् न जहो ।

भावार्थ—अहो ! साहसियों में रत्न यह बालक धन्य और इसकी महती सहन शक्ति भी धन्य है जो कि सिक्कियों से बांधकर बैत से पीटे जाने पर भी इस वीर बालक ने अपनी प्रतिज्ञा नहीं छोड़ी ।

कि दुस्त्यजं किल तृणीकृतभमिभोग ।
तृप्तात्मनामिह सतां जनताप्रियाणाम् ।
कि चाविधेयमसतां परपीडकानाम्,
कि दुस्सहं भूवि नृणां सुहृद्वतानाम् ॥१३६॥

शिवा-अन्वयः—इह तृणीकृत भूमिभोगतृप्तात्मनां जनताप्रियाणाम् सताम् किम् दुस्त्यजं, असताम् परपीडकानां च किम् अविधेयम्, भूवि सुहृद्वतानाम् नृणाम् किम् दुस्सहम् ।

भावार्थ—इस लोक में भूमि के भोगों को तृण के समान समझकर अपने अन्तःकरण में तृप्त, सम्पूर्ण प्राणियों के प्रिय सन्तों के लिए क्या दुस्त्याज्य है ? दूसरों को पीडा देने वाले दुष्टों के लिए क्या अविधेय है ? अर्थात् वे सब कुछ कर सकते हैं। दृढ़ती महापुरुषों के लिए पृथ्वी पर क्या दुःसह है ?

विघूय मूर्च्छा परिलब्धसंजः, मुहुर्मुहुर्मतृभुवंप्रणम्य ।
उत्थाय चोच्चर्जंय भारतेति, समुज्जगौ भारतभाग्यभानुः ॥१४०॥

शिवा-अन्वयः—भारतभाग्यभानुः मूर्च्छा विघूय परिलब्धसंजः मातृभुवम् मुहुर्मुहुः प्रणम्य च उत्थाय 'जय भारत' इति उच्चैः समुज्जगौ ।

भावार्थ—भारतभाग्य के सूर्य चन्द्रशेखर मूर्च्छा को छोड़ होश में आकर मातृभूमि को बार-बार प्रणाम करके उठकर 'जय भारत' इस प्रकार ऊंचे स्वर में बोलने लगे ।

विवृद्ध वीरस्य सप्तनसिन्धुविशोषि वीर्योत्कटवाडवाग्निम् ।
सुविस्मितास्त्यक्तनिमेषनेत्रा, गौराश्च भीता दशुस्तमेव ॥१४१॥

शिवा-अन्वयः—वीरस्य सप्तनसिन्धुः विशोषि वीर्योत्कट् वाडवाग्निम् विवृद्ध सुविस्मिताः भीताः गौराः त्यक्तनिमेषनेत्राः तमेव ददृशुः ।

भावार्थ—वीर वालक के शत्रु रूप समुद्र को सोखने वाले पराक्रम रूप उत्कट वाडवानल को समझकर अत्यन्त विस्मित भयभीत गोरे लोग निर्निमेष दृष्टि से उन्हें ही देखने लगे ।

(१) टिप्पणी—सप्तनसिन्धु विशोषि वीर्योत्कटवाडवाग्निम्—
सप्तना: शत्रवः अंगेजाः त एव सिन्धवः समुद्राः तेषां विशोषि-शोषणकर्ता
यः वीर्यरूपः उत्कटः वाडवाग्निः तम् ।

अवाप्तसंज्ञाय विचमंपृष्ठरवताकुलायामितविकमाय ।
ददौ चिकित्साथंमथो पणानि द्वित्राणि काराधिपतिः स तस्मै ॥१४२॥

शिवा-अन्वयः—अथ काराधिपति अवाप्तसंज्ञाय विचमंपृष्ठ रक्ताकुलाय अमितविकमाय तस्मै चिकित्साथंम् द्वित्राणि पणानि ददौ ।

भावार्थ—इसके पश्चात् उस काराधीश ने चेतना में आये हुए एवं उधडी चमडी वाले पीठ के रक्त से लथपथ अमित पराक्रमशाली उन चन्द्रशेखर को चिकित्सा के लिए दो तीन पैसे दिये ।

(२) टिप्पणीः—विगतं चर्म यस्मात् विकृतं चर्म यस्य वा तद् विचम विचर्मणः पृष्ठस्य रक्तेन आकुलाय इति विकृतचर्मपृष्ठाकुलाय ।

स आप्तकोपः पणकानि तस्य प्रक्षिप्य वक्त्रोपरि गामुवाच ।

विडम्बयन् वैरिग्यान् स्वकान्त्या प्रसह्य रोषाश्वनेत्रपद्मः ॥१४३॥

शिवा-अन्वयः—आप्तकोपः सः रोषाश्वनेत्रपद्मः स्वकान्त्या गौर-गणान् विडम्बयन् पणकानि तस्य वक्त्रोपरि प्रक्षिप्य प्रसह्य गाम् उवाच ।

भावार्थ—इस व्यवहार से चन्द्रशेखर को तुरन्त क्रोध आ गया । रोष से उनके कमल नेत्र लाल हो गये । वे अपनी कान्ति से अंग्रेजों को चकित करते हुए जेलर के दिये हुए पैसों को उसीके मुख पर फेंककर निर्भीक होकर यह वाणी बोले—

ते सन्ति चान्ये भुविभाररूपाः कलङ्कपङ्केन मलीमसास्याः ।

ये युध्मदीयं समुपेक्ष्य दत्तं पिण्डं शाठाः कुवकुरवल्लभन्ते ॥१४४॥

शिवा-अन्वयः—भुविभारभूताः कलङ्कपङ्केन मलीमसास्याः च ते अन्ये सन्ति ये शाठाः समुपेक्ष्य दत्तम् युध्मदीयम् पिण्डं कुवकुरवत् लभन्ते ।

भावार्थ—पृथ्वी पर भार के समान एवं कलङ्करूप कीचड़ से मलिन मुख वाले ऐसे लोग और होते हैं जो अपमान करके फेंके हुए तुम लोगों के दिये टूकड़े को कुत्तों की भाँति ले लेते हैं ।

अहं तु यौध्माकशिरः प्रसूनमालालसद्वायसभालमेदम् ।

स्वातन्त्र्यदेव्यं समुपाजिहीर्षुराजन्मवीरक्रतमाविभर्मि ॥१४५॥

शिवा-अन्वयः—अहम् तु लसद्वायसभालमेदम् यौध्माकशिरः प्रसूनमालाम् स्वातन्त्र्यदेव्यं समुपाजिहीर्षुः आजन्म वीरक्रतम् आविभर्मि ।

भावार्थ—मैं तो वायसराय का मस्तक ही जिसका सुमेह होगा ऐसे तुम लोगों के शिररूप पुष्पों की माला स्वतन्त्रता देवी को उपहृत करने के लिए जीवनपर्यन्त वीरत्रत ही धारण कर रहा हूँ।

टिप्पणी—लसद् वायसस्य वायसरायस्य व्रिटिशप्रेषितस्य भारत-प्रशासकस्य भालं मस्तकं मेरुः सुमेहः यस्यां सा ताम् । युष्माकम् इमानि यौष्माकाणि । यौष्माकाणि च तानि शिरांसि इति यौष्माकशिरांसि तान्येष प्रसूनानि पुष्पाणि इति यौष्माकशिरःप्रसूनानि तेषां माला ताम् ।

दण्डालयात् तं प्रतियान्तमित्थमाभाष्य इष्ट्वा जनता बहिष्ठा ।

वासो वसानं तनुरक्तरक्तं, सप्रेमबाष्यैः स्नपयाम्बभूव ॥१४६॥

शिवा-अन्वयः—इत्थम् आभाष्य दण्डालयात् प्रतियान्तम् तनुरक्त-रक्तम् वासः वसानम् तं इष्ट्वा बहिष्ठा (जनता) सप्रेमबाष्यैः स्नपयाम्बभूव ।

भावार्थ—इस प्रकार कहकर दण्डालय से बाहर निकलते हुए शरीर के खून से लथपथ कपड़े पहने हुए बालक चन्द्रशेखर को देखकर बाहर खड़ी जनता ने उन्हें तेत्रों की अशुद्धाराओं से नहला दिया ।

नीत्वाथ चैकेन सुहृत्तमेन गृह्णं चिकित्सादिकभूरियत्नैः ।

असेव्यताल्पैदिवसर्न् सोमः स्वस्थोऽभवत् भारतकीतिकेतुः ॥१४७॥

शिवा-अन्वयः—अन्य च एकेन सुहृत्तमेन गृह्णम् नीत्वा चिकित्सादिक भूरियत्नैः नृसोमः असेव्यत अल्पैः दिवसैः भारतकीतिकेतुः स्वस्थः अभवत् ।

भावार्थ—इसके अनन्तर एक मित्र के द्वारा घर ले जाकर चिकित्सादिक अनेक यत्नों से उन नरचन्द्र की सेवा की गयी और भारत के वीतिध्वज श्री चन्द्रशेखर थोड़े ही दिनों में स्वस्थ हो गये ।

टिप्पणी—ना सोम इव इति नृसोमः ‘उपमितं व्याघ्रादिभिः सामान्यप्रयोगे, इत्यनेन समासः ।

आयोजिता नेतृगणैस्तथैका सभाष्य वीरस्य समादराय ।

वाराणसेये सुविशालकक्षे द्रष्टुं तमायन् बहवोरिपुष्टम् ॥१४८॥

शिवा-अन्वयः—अस्य वीरस्य समादराय वाराणसेये सुविशालकक्षे नेतृगणैः तथा एका सभा आयोजिता तम् रिपुष्टम् द्रष्टुम् बहवः आयन् ।

भावार्थ—इसके बाद उस बीर के सम्मान के लिए वाराणसी के टाउन हाल में नेताओं द्वारा एक बहुत विशाल सभा की गयी उन शत्रुहन्ता को निहारने के लिए वहाँ बहुत से लोग आये ।

असंख्यमाला कुसुमः परीतं, मञ्चस्थितं तं लघुकायबालम् ।

दृष्टुं न शोके जनता समेता तद्वक्त्रपदमे कृतभूरिनिष्ठा ॥१४९॥

शिवा-अन्वयः—असंख्यमाला कुसुमः परीतम् मञ्चस्थितं तम् लघुकायबालम् तम् तद्वक्त्रपदमे कृतभूरिनिष्ठा समेता जनता दृष्टुम् न शोके ।

भावार्थ—असंख्य मालाओं एवम् पुष्पों से ढके हुए मंच पर स्थित उस बालक को आई हुई जनता ठीक-ठीक देख न पाई जो कि उसके मुख्यकमल को निहारने की निष्ठा से आयी थी ।

संबोध्य सर्वाङ्गिष्ठिषुरिद्वतेजा: वेत्रव्रणैः पूरितगात्रयष्टिः ।

क्रान्ति विधातुं द्विष्टो विहन्तुं स्वीयव्रतं निश्चितमस्यचष्ट ॥१५०॥

शिवा-अन्वयः—इद्वतेजा: वेत्रव्रणैः पूरितगात्रयष्टिः शिशुः सर्वान् संबोध्य क्रान्तिम् विधातुम् द्विष्टः विहन्तुम् निश्चितम् स्वीयव्रतम् अस्यचष्ट ।

भावार्थः—परम तेजस्वी तथा जिसके दुबले-पतले शरीर पर बैत के धाव भरे हुए ये उस बालक चन्द्रशेखर ने सबको सम्बोधित करके क्रान्ति करने के लिए शत्रुओं का हनन करने हेतु अपने निश्चित व्रत को सुस्पष्ट कहा ।

इत्यं वैरिवरुथवारिदघटासंघट्टवातोपमः,

प्रोद्यत् साहसर्धैर्यशीर्यं सुगुणैर्मित्राणिचोत्साहयन् ।

देशोऽस्मिन्नथ चन्द्रशेखर इव भ्राम्यन् रिपूंस्तापयन्,

रुद्याति शवितमलौकिकीं स्ववयसः पूर्वार्थं एवार्जयत् ॥१५१॥

शिवा-अन्वयः—इत्थम् वैरिवरुथ वारिदघटासंघट्टवातोपमः प्रोद्यत् साहसर्धैर्यशीर्यं सुगुणैः मित्राणि च उत्साहयन् अथ चन्द्रशेखर इव अस्मिन् देशे भ्राम्यन् रिपूंस्तापयन् स्ववयसः पूर्वार्थं एव गतिं अलौकिकीं रुद्याति अर्जयत् ।

भावार्थः—इस प्रकार शत्रु समूह रूप वादल की घटा को विश्वित करते हों लिए प्रबल वायु के समान आजादचन्द्रशेखर ने अपने उदीय-गान राहस, धैर्य, शौर्य स्वयं शिवजी के समान देश में भ्रमण करते हुए शत्रुओं को भयभीत करते हुए अपनी जीवनलीला के पूर्वाधिं में ही अलोकिक शक्ति एवं रुद्धाति अंजित कर ली थी ।

चन्द्रशेखरकाव्यस्य चन्द्रशेखरसंगता ।

शिवा पूर्वाधिंसंपृक्ता शिवेव तनुतां शिवम् ॥

इति सर्वमिनाय श्रीतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य
स्वामी रामभद्राचार्य विरचिते आजादचन्द्रशेखरचरिते

पूर्वाधिं: समाप्तः

॥ श्रीमद्राघवो विजयतेतराम् ॥

“आजादचन्द्रशेखरचरितम्”

उत्तराधिः

अथ स्वदेशाद्विषतां पलायनं, न सम्भवं शान्तिवलेन केवलम् ।
विचिन्त्य चेत्थं हृदि चन्द्रशेखरः, प्रचक्रमे कर्तुमसौ स्वसंघटम् ॥१॥

शिवा-अन्वयः—अथ केवलम् शान्तिवलेन स्वदेशाद्विषताम्
पलायनम् न सम्भवम् च इत्थं हृदि विचिन्त्य असौ चन्द्रशेखरः स्वसंघटम्
कर्तुम् प्रचक्रमे ।

भावार्थः—अब उत्तराधिः का प्रारम्भ माझे लिक 'अथ' शब्द से करते हैं। केवल शान्ति के बल से अपने देश भारतवर्ष से अंग्रेज शत्रुओं का पलायन सम्भव नहीं है इस प्रकार हृदय में विचार करके बीर वालक चन्द्रशेखर ने अपनी क्रान्तिकारी सेना का संघटन प्रारम्भ कर दिया ।

समयदेशो निजभव्यभाषणैः,

समुल्लसद्वीररसंद्विषत्पः ।

स्वचेष्टितः शौर्यमयैः कणे कणे,

ध्यज्ञिभ्यत् क्रान्तिमयी च भावनाम् ॥२॥

शिवा-अन्वयः—द्विषत्पः समुल्लसत् वीररसैः निजभव्यभाषणैः
शौर्यमयैः सुचेष्टितैः समयदेशे कणे कणे क्रान्तिमयी भावनाम् व्यज्ञि-
भ्यत् ।

भावार्थः—शत्रुनाशक चन्द्रशेखर ने बीररस से ओतप्रोत अपने भव्य ओजस्वी भाषणों द्वारा और बीरतापूर्वक विविध चेष्टाओं द्वारा समूर्ण देश के कण कण में क्रान्तिमयी भावना को जाग्रत करा दिया ।

अनेकशस्त्रवत्कुटुम्बसौहृदा भटा: पुमांसस्तरणाकान्तयः ।

स्वतन्त्रतायै विजित्रिक्षया परैरुपेयुराजादममद्विक्रमम् ॥३॥

शिवा-अन्वयः—अनेकशः त्यक्तकुटुम्बसौहृदा तरुणाकान्तयः
पुमांसः भटा: स्वतन्त्रतायै परैः विजित्रिक्षया अमन्दविक्रमम् आजादम्
उपेयुः ।

भावार्थ—अनेकानेक तरुण सूर्य के समान क्रान्तिवाले वीर-युवक स्वतन्त्रता के लिये कुटुम्ब की ममता छोड़कर शत्रुओं के साथ विघ्रह करने की इच्छा से अतुलनीय पराक्रमशाली श्रीचन्द्रशेखर आजाद की सेवा में आ गये ।

त एव वीरा बलधैर्यमूर्तयो, दले नियुक्ताः किल चान्द्रशेखरे ।
सुखं विहाय विनुमाप्तसङ्कुटां स्वकां महीं यैर्भरतानुजायितम् ॥४॥

शिवा-अन्वयः—बलधैर्यमूर्तयः ते एव वीराः चान्द्रशेखरे दले नियुक्ताः यैः सुखम् विहाय आप्तसङ्कुटाम् स्वकाम् महीम् अवितुम् भरतानुजायितम् ।

भावार्थ—वे ही बल एवं धैर्य की मूर्ति वीरपुरुष चन्द्रशेखर के दल में नियुक्त किये गये जिनके द्वारा अपना सुख छोड़कर सङ्कुटापन्न अपनी मातृभूमि की रक्षा करने के लिये भरतानुयायी अर्थात् शत्रुघ्न के समान आचरण करने का निश्चय किया गया ।

पाद टिप्पणी—भरतस्य श्रीरामानुजस्य अनुजः भरतानुजः श्री शत्रुघ्नः भरतानुज इव आचरन्ति इति भरतानु जायन्ते । 'कर्तुःक्षयसलोपश्च' इत्यनेन क्यङ्ग्रप्रत्ययः । तैः अभरतानुजाययत इति भरतानुजायितम् तच्छीलः इति । भाव यह है कि जैसे श्रीअवध के छत्रघंग के अनन्तर श्रीराम की पादुका पाकर श्रीभरत जी तो नन्दीग्राम में विराजे किन्तु श्री शत्रुघ्नलाल उस दारुण संकट बेला में अपने समस्त सुखों को तिलाङ्जलि देकर चतुर्दशवर्ष पर्यन्त श्रीअवध की सेवा करते रहे, उसी प्रकार जो समस्त सुखों का बलिदान करके मातृभूमि की रक्षा के लिये कृतप्रतिज्ञ हुए उन्हों को चन्द्रशेखर के दल में नियुक्त किया गया ।

स राजगुर्वादि निजानुगामिनः, सभक्तसिहान् बटुकेश्वरादिकान् ।
उपेत्य तान् रामदशास्यसंयुगे, प्रबोरमर्कान् हनुमान् इवावभौ ॥५॥

शिवा-अन्वयः—सः सभक्तसिहान् बटुकेश्वरादिकान् राजगुर्वादि निजानुगामिनः उपेत्य रामदशास्यसंयुगे प्रबोरमर्कान् उपेत्य हनुमान इव आवभौ ।

भावार्थ—वे आजाद चन्द्रशेखर भगतसिह बटुकेश्वर राजगुरु आदि अपने अनुगामी क्रान्तिकारी युवकों को प्राप्त कर श्रीराम रावण संग्राम वीर बानरों को पाकर हनुमान की भाँति मुशोभित हुए ।

टिप्पणी २) — दश आस्थानि मुखानि यस्य इति दशास्यो रावणः । रामश्च दशास्यश्च इति रामदशास्यौ तयोः संयुगं इति रामदशास्यसंयुगं तस्मिन् रामदशास्यसंयुगे ।

रामप्रसादेन समे प्रबीराः सम्प्रेरिता विस्मिलवंशजेन ।

प्रारेभिरे क्रान्तिमन्दशीर्या आजादमुख्याः द्विषदवद्वाताः ॥६॥

शिवा-अन्वयः—विस्मिलवंशजेन रामप्रसादेन संप्रेरिताः अमन्दशीर्याः द्विषदवद्वाताः आजादमुख्याः समे प्रबीराः क्रान्तिम् प्रारेभिरे ।

भावार्थ—रामप्रसाद विस्मिल की प्रेरणा से शत्रुघ्न बादलों को नष्ट करने हेतु वायु के समान अतुलनीय पराक्रम वाले आजाद प्रमुख वोर युवकों ने क्रान्ति प्रारम्भ कर दी ।

तृणाय मत्वा गृहवैभवादि, क्षुधंपिपासां विगणण्य शूराः ।

प्रतिक्षणं देशसमुद्दिधीष्वा प्रवधंयाऽचक्ररमी प्रयत्नात् ॥७॥

शिवा-अन्वयः—अग्नो शूराः गृहवैभवादि तृणाय मत्वा क्षुधात्ति पिपासाम् विगणण्य प्रयत्नात् प्रतिक्षणम् देशसमुद्दिधीष्वामिप्रवधंयाऽचक्रः ।

भावार्थः—ये क्रान्तिकारी गृह संम्पत्ति आदि को तृण के समान मानकर भूख प्यास की कोई चिन्ता न करते हुये अपने प्रवासों से प्रत्येक क्षण देश के स्वातन्त्र्य की इच्छा को प्रबल करने लगे ।

अथार्थावश्यक अशत्रशस्त्र क्षयाय संन्यस्य च चालनाय ।

स्वीचक्रुरेते हृदये विचिन्त्य दस्यून् व्युदस्तु त्रिलदस्युवृत्तिम् ॥८॥

शिवा-अन्वयः—अय दस्यून् व्युदस्तुम् अस्त्रशस्त्रक्षयाय च संन्यस्य चालनाय अर्थम् आवश्यकम् इतिएते हृदये विचिन्त्य दस्युवृत्तिम् स्वीचक्रः ।

भावार्थः—इसके अनन्तर अंग्रेजों जैसे दुष्ट डाकुओं को समाप्त करने के लिये अस्त्रशस्त्रों को खरीदने तथा सैन्य के संचालनार्थ धन आवश्यक है इस प्रकार हृदय में विचार कर इन क्रान्तिकारी महापुरुषों ने न चाहते हुये भी देश की समस्या का समाधान करने के लिये दस्यु वृत्ति स्वीकार ली ।

ज्ञात्वापि धर्मात् प्रतिक्लमेतद् विगहृतं कर्म विरुद्धवृत्तिः ।

स्वीचक्रुरेतपुरुषाहिताय, दासो मनुष्यो हि परिस्थितीनाम् ॥९॥

शिवा-अन्वयः—पुरुषाः एतद् विगहृतम् कर्मधर्मात् प्रतिकूलम् विरुद्धवृत्ति ज्ञात्वापि हिताय स्वीचक्रः हि मनुष्यः परिस्थितीनाम् दासः ।

भावार्थः—यदपि ये महापुरुष इस दस्युकर्म को अपने प्रतिकूल निन्दित एवं धर्म से विरुद्ध जानते थे किर भी उन्हें देश के लिये यह सब करना पड़ा, क्योंकि मनुष्य परिस्थितियों का दास होता है।

लूँठेम तेषां द्रविणानि कामं पापाय ये केवलमर्जयन्ति ।
तेषां धनं धन्यमदः स्वदेश विष्वद्विनाशाय चकल्पते यत् ॥१०॥

शिवा-अन्वयः—तेषाम् द्रविणानि कामम् लूँठेम ये केवलम् पापाय अर्जयन्ति अदः तेषाम् धनमध्ययं यत् स्वदेश विष्वद्विनाशाय कल्पते ।

भावार्थः—हम लोग उन्हीं का धन पर्याप्त रूप से लूटें जो केवल पाप के लिये कमाते हैं उनका वह धन धन्य है जो देश की विपत्ति के नाश के लिये उपयुक्त होता है।

कदाप्येका महाराजी राजस्थान निवासिनी ।
अधोषयत् किमप्येकं काशीस्थम् शुभलक्षणम् ॥११॥
शिवलिङ्गं समाहतुं जीवहत्यां बिना तथा ।
पुरस्कारं समानेत्रे मुद्रा पञ्चसहस्रकम् ॥१२॥
अत्रश्लोकद्वयं एकान्वयन् ।

शिवा-अन्वयः—कदापि राजस्थाननिवासिनी एका महाराजी किमपि काशीस्थम् शुभलक्षणम् एकम् शिवलिङ्गं जीवहत्याम् बिना समाहतुम् अधोषयत् तथा समानेत्रे मुद्रापञ्चसहस्रम् पुरस्कारं अधोषयत् ।

भावार्थः—किसी समय राजस्थान की महाराजी ने ऐसी धोषणा की “कि सभी लक्षणों से युक्त एक काशीस्थ शिवलिङ्ग लाया जाय जिसमें जीव हत्या न हो। लाने वाले को पाँच हजार अर्गकिंवा पुरस्कार रूप में दी जायेंगी।”

थ्रुत्वा कार्यं विधातुं तदैच्छन् आजादनेत्रिकाः ।
द्रव्येणानेन सैन्यस्य लाभः स्यात् प्रचुरं ध्रुवन् ॥१३॥

शिवा-अन्वयः—एतत् थ्रुत्वा आजादनेत्रिकाः तद् कार्यम् विधातुम् ऐच्छन् । अनेन द्रव्येण सैन्यस्य ध्रुवम् प्रचुरम् लाभः स्यात् ।

भावार्थः—यह सुनकर आजाद के अनुयायी लोगों ने शिवलिङ्ग पहुँचाने का निर्णय लिया क्योंकि इस द्रव्य से सेना का बहुत लाभ हो जाता ।

प्रतिक्षणं समाकीर्ण मन्दिरं वीक्षयते भट्टाः ।
नाशकमुवन् समानेत्रुं मूर्ति हत्यां बिना किल ॥१४॥

शिवा-अन्वयः—प्रतिक्षणम् मन्दिरम् जनावीर्णम् वीक्षण ते भट्टाः हत्याम् बिना मूर्तिम् समानेत्रुम् नाशकमुवन् किल ।

भावार्थः—प्रतिक्षण मन्दिर को भीड़ से छिरा हुआ देखकर वीर कान्तिकारी हत्या के बिना मूर्ति लाने में समर्थ न हुए ।

केचित् प्राहुर्जनान् हत्वा शिवलिङ्गं प्रदीयताम् ।

कथं ज्ञास्यति सा राज्ञी यद् वृत्तं विहितं हि नः ॥१५॥

शिवा-अन्वयः—केचित् प्राहुः जनान् हत्वा शिवलिङ्गं प्रदीयताम् हि नः यद् वृत्तम् विहितम् तत् सा राज्ञी कथम् ज्ञास्यति ।

भावार्थः—कुछ लोगों ने कहा कि लोगों को मारकर शिवलिङ्ग अपहरण के माध्यम से रानी को दे दिया जाय हूम लोगों द्वारा किया गया वृत्त वह रानी कैसे जानेगी ।

सुनिशम्य वचः स कंतवं गदतां गूढविचारचर्चया ।

समभाष्यत चन्द्रशेखरः सुहृदः सान्द्रगिरेव शिक्षयन् ॥१६॥

शिवा-अन्वयः—गूढविचारचर्चया गदतां सकंतवं वचः सुनिशम्य सान्द्रगिरा सुहृदः शिक्षयन् इव चन्द्रशेखरः समभाष्यत ।

भावार्थः—इस प्रकार गूढ विचारों की चर्चा के माध्यम से बोलते हुये मित्रों के कपट पूर्ण वचन सुनकर अपनी मधुर वाणी से अपने मित्रों को चरित्र की शिक्षा देते हुए से श्रीचन्द्रशेखर ने कहा ।

अयि भो निजदेशभूषणाः किमवोचन् वचनं छलान्वितम् ।

किमु कर्तुमियं प्रतारणा सुशका भारतवर्षवासिभिः ॥१७॥

शिवा-अन्वयः—अयिभोः निजदेशभूषणाः छलान्वितम् वचनम् किमवोचन् किम् इयम् प्रतारणा भारतवर्षवासिभिः कर्तुम् सुशका ।

भावार्थः—हे अपने देश के आभूषणस्वरूप मित्रो ! आप लोगों ने इस प्रकार कपटपूर्ण वचन क्यों कह डाला । क्या भारतवर्षवासी जो कि भरत की मर्यादा का अनुसरण करते हैं, किसी के साथ इस प्रकार वज्रना कर सकते हैं ?

अयमेव मणिः सुदुर्लभो भवसिन्धोः सुचरित्रसंज्ञकः ।

इममेत्य निजार्थलोलुपा परिहातुं तृणवत्स्थिता वयम् ॥१८॥

शिवा-अन्वयः—अयमेव सुचरित्रसंज्ञकः भवसिन्धोः सुदुर्लभः मणिः इमम् एत्य निजार्थलोलुपा वयम् तृणवत् परिहातुम् स्थिताः ।

भावार्थ—भवसागर का अत्यन्त दुलभ 'चरित्र' नामक यही तो एक-मणि है अरे ! हन लोग सामान्य से अर्थ के लोभवश इसी चरित्रमणि को पाकर नी इसे तृप्त के समान छोड़ने को उद्यत हैं ।

यदि चेज्जनता विविन्निशामपहर्तुं कृतनिश्चया वयम् ।

प्रथमं कलयेम भासुरं स्वमनो व्योमचरित्रभास्वता ॥१६॥

शिवा-अन्वयः—यदि चेत् जनताविपन्निशाम् अपहर्तुम् वयम् कृत-निश्चयाः तर्हि प्रथमम् एव स्वमनो व्योमचरित्रभास्वता भासुरम् कलयेम ।

भावार्थ—यदि हम जनता की विपत्ति रूप रात्रि को नष्ट करने के लिये कृतनिश्चय हैं तो सबसे पहले हमें अपने चरित्ररूप सूर्य से अपने मन-रूप आकाश को प्रकाशमान कर लेना चाहिये ।

भगवान् सकलं हि पश्यति सकलस्थः सकलस्य चेष्टितम् ।

नहिं गुप्तमसुष्य किञ्चन ननु राजी परिवद्वनेन किम् ॥२०॥

शिवा-अन्वयः—हि सकलस्थः भगवान् सकलस्य सकलं चेष्टितं पश्यति अमुष्यगुप्तम् किञ्चन न हिराजी परिवद्वनेन किम् ननु ।

भावार्थ—सबके हृदय में रहने वाले भगवान् सबका सब कुछ देख रहे हैं, उनसे कुछ भी छिपा नहीं है इसलिये राती को ठगने से क्या लाभ ?

इत्थं निशम्यामृतकल्पवाक्यं निगद्यमानं शशिशेखरेण ।

स्वयं न्यवर्तन्त कुकर्मणस्ते साग्रेद्वेनं प्रशसंशुरीद्यम् ॥२१॥

शिवा-अन्वयः—इत्थम् शशिशेखरेण निगद्यमानम् अमृतकल्प-वाक्यम् निशम्य ते कुकर्मणः स्वयम् न्यवर्तन्त एतम् ईड्यम् साग्रेद्वम् प्रशसंशुः ।

भावार्थ—इस प्रकार चन्द्रशेखर द्वारा कहे जाते हुए अमृत के समान वाक्य सुनकर वे लोग स्वयं इस कुत्सित कर्म से हट गये और स्तुतियोग्य चन्द्रशेखर को बार-बार प्रशंसा करने लगे ।

अर्थकदा कर्णपुरे गृहन्ते प्रविश्य चैकस्य विणिजनस्य ।

अलव्यमुद्रालयकुञ्जकाश्च समे वर्मूर्चिकलप्रयासाः ॥२२॥

शिवा-अन्वयः—अथ एकदा कर्णपुरे एकस्य विणिजनस्य गृहम् प्रविश्य अलव्यमुद्रालयकुञ्जकाः ते समे विकलप्रयासाः वर्मूरुः ।

भावार्थ—इसके पश्चात् एक बार कानुरुद्धर्मे ये लोग एक विणिक के घर में प्रविष्ट हो गये वहाँ तिजोरी की कुंजों न पाकर अपने प्रयास की विफलता से बहुत दुःखी हुए ।

निरीक्ष्य कार्पण्यमद्भ्रातोभं तस्मै प्रदायाथ रुषा चपेताम् ।

गृहीतवांस्तस्य धनं समपं स्वकार्यचुंचुः शशिशेखरोद्यम् ॥२३॥

शिवा-अन्वयः—अथ स्वकार्यचुंचुः अयम् शशिशेखरः अथ कार्पण्यम् अदभ्रातोभम् निरीक्ष्य रुषा तस्मै चपेताम् प्रदाय तस्य समग्रमधनम् गृहीतवान् ।

भावार्थ—इसके पश्चात् अपने कार्य में कुणल चन्द्रशेखर ने उस बनिया का कार्पण्य एवं बहुत बड़ा लोभ देखकर कोध से उसे एक थप्पड़ लगाकर उसका पूरा धन ले लिया ।

तत्ताडनालव्यभयो वणिक् सस्तनुं जहो तीर्थ इवाति पुण्ये ।

श्रुत्वा तदीयं निधनं स्वकेन दुःखाम्बुद्धी शेखर आममज्ज ॥२४॥

शिवा-अन्वयः—तत्ताडनात् लव्यभयः सः वणिक् जतिपुण्ये तीर्थे इव तनुं जहो स्वकेन तदीयं निधनं श्रुत्वा शेखरः दुःखाम्बुद्धी आममज्ज ।

भावार्थ—उनके थप्पड़ लगाने से उस विणिक ने भयभीत होकर अति पुण्य तीर्थ में मानो अपने जारीर का विसर्जन किया, अपने से उसका मरण सुनकर चन्द्रशेखर शोक सागर में ढूब गये ।

अहो अनहृः स वधस्य किन्तु भया हृतः पापकृताधमेन ।

अतः स चत्वारि दिनानि यावत् व्रताय नैवान्नजलं प्रलेभे ॥२५॥

शिवा-अन्वयः—अयम् वधस्य अनहृः किन्तु पापकृता अधमेन भया हृतः अतः सः चत्वारि दिनानि यावत् व्रताय अन्नजलम् नैव प्रलेभे ।

भावार्थ—अहो ! वह विणिक मरने योग्य नहीं था, किन्तु मुक्ष अधम पापी के द्वारा वह मारा गया, इस प्रकार उसका प्रायशिक्षण करने के लिये चन्द्रशेखर आजाद ने चार दिन तक अन्न जल नहीं लिया ।

ग्रामेऽथ कस्तिमिश्चदमी यथोक्तलक्षाप्तये द्रव्यजिधिक्षयात्तः ।

चक्रुभृशुर्ण्डिधवनिभग्नधैर्यात् ग्राम्यान् समन्तात् कृतदस्युवेशाः ॥२६॥

शिवा-अन्वयः—अथ कृतदस्युवेशा अमी यथोक्तलक्षाप्तये द्रव्य जिधिक्षया आत्मा कस्तिमिश्चद् ग्रामे ग्राम्यान् भुभुण्डिधवनिभग्नधैर्यात् चक्रुः ।

भावार्थ—इसके अनन्तर डाकुओं का वेश बनाकर इन कान्ति-कारियों यथानिदिष्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिये द्रव्य को ग्रहण करने की इच्छा से आर्त होकर किसी ग्राम में प्रवेश करके ग्रामवासियों को बन्दूक की गोली की ध्वनि से भयभीत कर दिया ।

यस्मिन् गृहे ते विविशुः प्रवीरास्तत्रास्त वृद्धा सहकन्यकांका ।
सम्मर्दभीतेरदान्नकिञ्चिद्धनं निराशाः स्म ततः प्रयान्ति ॥२७॥

शिवा-अन्वयः——ते प्रवीरा: यस्मिन् गृहे विविशुः तत्र कन्यका सह
एका वृद्धा आस्त सम्मर्दभीतेः सा किञ्चिच्च धनम् न अदात् निराशाः ततः
प्रयान्ति स्म ।

भावार्थ—जिस घर में इन दीरों ने प्रवेश किया वहाँ अपनी कन्या
के साथ एक वृद्धा रहती थी । भीड़ के भय से उसने कुछ धन नहीं दिया
और वे लोग निराश होकर वहाँ से लौटने लगे ।

किञ्चिद् दलीयोऽस्मृतधर्मनीतिस्तामेव वालां परिवीक्ष्यमाणः ।
शान्तां भयात् कम्पितदेहवल्लीं वाल्ये सुशीलां सुखमाद्र्यन्तीम् ॥२८॥

शिवा-अन्वयः—किञ्चित् अस्मृतधर्मनीतिः दलीयः शान्ताम् भयात्
कम्पितदेहवल्लीम् सुशीलाम् वाल्ये: सुखम् आद्र्यन्तीम् ताम् एव वालाम्
परिवीक्ष्यमाणः ।

भावार्थ—कोई चन्द्रशेखर के दल का ही व्यक्ति धर्मनीति को
छोड़कर उसी कन्या को देखने लगा जो परम शान्त थी तथा जिसकी
शरीरलता भय से कम्पित हो रही थी एवं जो सुशीला अश्रुओं से अपना
मुख धो रही थी ।

अद्वितीय लुब्धो विद्युशेखरेण नवामलिः पङ्कजनोभिवार्याम् ।
उत्तोल्य रोवेण भुजुण्डिकांस्वां निवार्य गम्भीरवं जगजेऽ ॥२९॥

शिवा-अन्वयः—नवाम् पङ्कजनोम् इव आर्याम् परिवीक्ष्यमाणः
अतिः इव लुब्धः विद्युशेखरेण अद्वितीयरोवेण स्वाम् भुजुण्डिकाम् उत्तोल्य
निवार्य गम्भीरवम् जगजेऽ ।

भावार्थ—नवीन कमलिनी पर लुब्ध भ्रमर की भाँ तिउस आये-
कन्या को निहारते हुए अपने सैनिक को देखकर चन्द्रशेखर को अत्यन्त
कोध आया और वे बन्दूक उठाकर अपने सैनिक को रोकते हुए गम्भीर
स्वर में गरज पड़े ।

रे नीच ! कामिन ! भव सावधानो,
मा भूः पतङ्गः खल ! कन्यकाग्नी ।
नो चेत् क्षणाद् भीमभुजुण्डिगोल्या,
त्वां प्रेतभर्तुभवनं नयामि ॥३०॥

शिवा-अन्वयः—रे नीच ! कामिन ! सावधानो भव ! खल ! कन्य-
काग्नी पतङ्गो मा भूः नो चेत् क्षणात् भीमभुजुण्डिगोल्या त्वाम् प्रेतभर्तुः
भवनम् नयामि ।

भावार्थ—अरे नीच ! कामी ! सावधान हो जा । कन्या रूप अग्नि
में पतङ्ग मत बन, नहीं तो इसी क्षण बन्दूक की भवंकर गोली से तुझे
यमराज के भवन भेज दूँगा ।

न्यवर्तीताकर्ण्य वचः स तस्य प्रचण्डपापात् प्रथितव्रतस्य ।

आजादमालोक्य चरित्रमूर्तिं वृद्धापि तत् समुखमाजगाम ॥३१॥

शिवा-अन्वयः—तस्य प्रथितव्रतस्य वचः आकर्ण्य सः प्रचण्डपापात्
न्यवर्तीत वृद्धा अपि चरित्रमूर्तिम् आजादम् आलोक्य तत् समुखम्
आजगाम ।

भावार्थ—उन छठवर्ती चन्द्रशेखर का वचन सुनकर वह सैनिक इस
प्रचण्ड पाप से निवृत्त हो गया इस प्रकार चरित्र की साक्षात् मूर्ति
चन्द्रशेखर आजाद को निहारकर वह वृद्धा महिला भी उनके सामने आ
गयी ।

सा कम्पमानं करमस्य पूते मुखे निधायाथ पुनर्यंगादीत् ।

धन्योऽसि धन्या जननी त्वदीया गन्तासि शीघ्रं जनताप्रियत्वम् ॥३२॥

शिवा-अन्वयः—सा अस्य पूते मुखे कम्पमानम् करनिधाय पुनः
न्यगादीत् धन्य असि त्वदीया जननी धन्या । शीघ्रं जनताप्रियत्वम्
गन्तासि ।

भावार्थ—वह वृद्धा आजाद चन्द्रशेखर के पवित्र मुख पर अपना
कपिता हुआ हाथ रखकर बोली, “वत्स ! तुम धन्य हो, तुम्हारी माँ
धन्य है, तुम शीघ्र ही जनता के प्रिय बन जाओगे ।

त्वं वस्तुतोनासि कुमार दस्युः किञ्चिद् विशेषोऽध्रुवमत्रहेतुः ।

न दस्यवस्त्वत् सद्वा भवन्ति चरित्ररक्षानिरताः कदाचित् ॥३३॥

शिवा-अन्वयः—हे कुमार ! वस्तुतः त्वम् दस्युः न असि अत्र ध्रुवम्
किञ्चित् विशेषः हेतुः दस्यवः कदाचित् त्वत् सद्वा चरित्ररक्षानिरताः न
भवन्ति ।

भावार्थ—वृद्धा ने कहा ‘हे कुमार । बास्तव में तुम डाकू नहीं हो
निश्चय ही यहाँ कोई विशेष कारण है, क्योंकि डाकू लोग कभी भी तुम
जैसे चरित्र रक्षा में तत्पर नहीं होते ।

निशम्य तस्मात् जनताविपत्ति विनाशलक्ष्यं धनसंग्रहं तम् ।
प्रशस्य तेजो नूबरस्य तस्य सारुद्धकण्ठापि जरा जगाद् ॥३४॥

शिवा-अन्वयः—तस्मात् जनताविपत्तिविनाशलक्ष्यम् तम् धनसंग्रहम्
निशम्य तस्य नूबरस्य तेजः प्रशस्य सारुद्धकण्ठा अपि जरा जगाद् ।

भावार्थ—जनता के विपत्ति के विनाशलक्ष्य की पूर्ति के लिये
ही वह धनसंग्रह है, इस प्रकार चन्द्रशेखर से सुनकर उन नरथ्रेष्ठ के तेज की
प्रशंसा करके वह वृद्ध महिला गदगद् कण्ठ से बोली ।

स्वसुस्तबोद्वाहकृते मयार्थः, समर्जितोयस्तमुपाहरामि ।
मुदा गृहीत्वा कुरु लक्ष्यसिद्धि, शिवोऽस्तु पन्थास्तव भारतेन्दोः ॥३५॥

शिवा-अन्वयः—हे भारतेन्दो तव स्वमुः उद्वाहकृते मयार्थः
अर्थः समर्जितः तम् उपाहरामि मुदा गृहीत्वा लक्ष्यसिद्धिम् कुरु तव पन्थाः
शिवः अस्तु ।

भावार्थ—हे भारत के चन्द्रमा ! तुम्हारी बहन के विवाह के लिये
मैंने जो धन इकट्ठा किया था वही तुम्हें उपहार में दे रही हूँ, इसे ग्रहण
करके लक्ष्य की सिद्धि करो, तुम्हारा मार्ग कल्याणप्रद हो ।

इत्थं निशम्य जरया वचनं तयोक्तम्,
धर्मान्वितं सकरुणं करुणैकमूर्तिः ।
तां चन्द्रशेखर उवाच चरित्रसिद्ध्यः,
सारेन्दुशेखर उरुक्रमतुल्यतेजाः ॥३६॥

शिवा-अन्वयः—इत्थम् तया जरया उक्तम् धर्मान्वितम् सकरुणम्
वचनम् निशम्य करुणैकमूर्तिः चरित्रसिद्धुसारेन्दुशेखर उरुक्रमतुल्यतेजाः
चन्द्रशेखर ताम् उवाच ।

भावार्थ—इस प्रकार बद्धा के द्वारा कहे हुए धर्मयुक्त करुणापूर्ण
वचन सुनकर करुणा की अद्वितीय मूर्ति तथा चरित्र क्षीरसागर के सारभूत
चन्द्रमा को अपना अलङ्कूरण बनाने वाले भगवान् वामन के समान तेजस्वी
श्री चन्द्रशेखर आजाद उस वृद्ध महिला से बोले ।

धिग्भातरं कृतमहाघमभाग्यभाजम्,
मां यः स्वमुः परिणयार्थं धनस्य हर्ता ।
साहाय्यकोटिशतमेव न सम्बिधते,
कि मावशेन भगिनी भजते प्रमोदम् ॥३७॥

शिवा-अन्वयः—कृत महाघम् अभाग्याजग् गाग् भ्रातरम् धिग्भा-
यः साहाय्य कोटिशतम् न सम्बिधते स्वतुः परिणयार्थं धनस्य हर्ता
मावशेन किम् भगिनी प्रमोदम् भजते ?

भावार्थ—महान् पाप करने वाले अभागे मुक्त जैसे भ्राता को
धिक्कार है, जो बहन की करोड़ों सहायता तो नहीं कर सकता उलटे
उसके विवाह के लिये इकट्ठे किये हुए धन का अपहरण कर लेता है । क्या
मुक्त जैसे जघन्य भ्राता से बहन को आनन्द का अनुभव होता है ?

मात्रव्र्णं जामि धनमेतदहं न लप्स्ये,
यन्मे स्वमुः परिणयाय समर्जि शशवत् ।
जीविष्यते यदि सुखं भगिनीविवाह,
मालोक्यन् स्वनयनं सफलं करिष्ये ॥३८॥

शिवा-अन्वयः—हे मातः ! वजामि मे स्वमुः परिणयाय यत् शशवत्
समर्जि एतत् धनम् अहम् न लप्स्ये । यदि जीविष्यते तदा सुखम् भगिनी
विवाहम् आलोक्यन् स्वनयनम् सफलम् करिष्ये ।

भावार्थ—हे माँ ! अब मैं जा रहा हूँ जो मेरी बहन के विवाह के
लिये आपके द्वारा सदा से एकत्र किये गये इस धन को मैं नहीं लूँगा,
यदि जीता रहूँगा तब सुखपूर्वक बहन के विवाह को देखकर अपने नेत्र को
सफल करूँगा ।

तां भवितनिर्भरमना शिरसा प्रणम्य,
मित्रैः प्रशस्तचरितः समग्रात् प्रवीरः ।
एवं चरित्रकिरणैः पुरुषक्षेपेशः,
सम्पूर्णभारतनभो धबलं चकार ॥३९॥

शिवा-अन्वयः—भवितनिर्भरमना: शिरसा ताम् प्रणम्य मित्रैः
प्रशस्तचरितः प्रवीरः समग्रात् एवम् पुरुषक्षेपेशः चरित्रकिरणैः सम्पूर्ण-
भारतनभः धबलम् चकार ।

भावार्थ—वीर चन्द्रशेखर भवितपूर्ण भन से उस बद्धा को प्रणाम
करके चले गये । मित्रों के द्वारा उनके इस चरित्र की भूरि-भूरि प्रशंसा
की गयी । इस प्रकार पुरुषों मैं चन्द्रमा के समान आजाद, चरित्र रूप
किरणों से सम्पूर्ण भारत रूप आकाश को धबल बनाते रहे ।

एकोनविशति शतोत्तरलोकसप्त,
संह्यान्विते रिपुगणः सह खिर्ष्टवर्णे ।
आन्दोलनं समकरोत् किल गान्धिवर्णः,
तस्मिन्निमे बहुतरं विद्धुः स्वयोगम् ॥४०॥

शिवा-अन्वयः—एकोनविशतिशतोत्तरलोकसप्तसंह्यान्विते खिर्ष्टवर्णे गान्धिवर्णे: रिपुगणः: सह आन्दोलनम् समकरोत् तस्मिन् इमे बहुतरम् स्वयोगम् विद्धुः ।

भावार्थ—१९२१ ईसवी में जब महात्मा गांधी ने जन्मसूह अंग्रेजों के साथ असहयोग आन्दोलन किया था उसमें भी इन क्रान्तिकारियों ने अपना बहुत योगदान दिया ।

टिप्पणी—एकोनविशतिशतोत्तरलोकसप्तसंह्यान्विते—लोकास्त्रयः, लोकगुणिताः सप्त इति लोकसप्त एकविशति । एकोनविशतिशतेभ्यः उत्तराणि लोक सप्त यस्यां एवं परिमिता या संख्या तया अन्विते ।

कस्मिशिच्चदेतेऽथ गृहे यथोक्तम्,
प्रारब्धवन्तो निजदस्युकार्यम् ।
भुशुण्डिकानाद विनीतनिद्रा,
ग्राम्याः सहास्त्रास्तरसाभ्यधावन् ॥४१॥

शिवा-अन्वयः—अथ एते कस्मिशिच्चद गृहे यथोक्तम् निजदस्युकार्यम् प्रारब्धवन्तः भुशुण्डिकानादविनीतनिद्राः सहास्त्राः ग्राम्याः तरसा अभ्यधावन् ।

भावार्थ—एक दिन चन्द्रशेखर आदि क्रान्तिकारियों ने एक किसी घर में प्रथम कहे हुए लक्ष्य के अनुसार अपना दस्यु कार्य अर्थात् धन लूटना प्रारम्भ कर दिया बन्दूकों की गङ्गड़ाहट से जब गर्वि बालों की नींद खुली तब वे अस्त्र-शस्त्र लेकर बेग से ढीड़ पड़े ।

प्रचिक्षिपु केचिदभीषु यष्टी भूल्लानि केचित् परशूं स्तथोग्रान् ।
कृत्वा घटाटोपमयं गृहं तत् स्थिताः समावृत्य यथा धनास्ते ॥४२॥

शिवा-अन्वयः—केचिदभीषु यष्टि प्रचिक्षिपुः केचिदभूल्लानि तथा उग्रान् परवून् प्रचिक्षिपु तद् गृहम् घटाटोपमयम् कृत्वा ते समे यथा धनाः समावृत्य स्थिताः ।

भावार्थ—कुछ लोगों ने उन पर लाठियाँ चलाई कुछ लोगों ने

भाले तथा फरसे फेंके, इस प्रकार उस घर को बाहरां भी भाँति भटाचारा बनाकर सभी ग्राम निवासी चारों ओर से घेरकर छाँक हो गये ।

निरीक्ष्य पाथोधिमिवाप्तकोपं सम्मर्द्दमेते स्वधनं विहाय ।

सर्वेऽपलायन्त भटाः क्याचित् स्त्रियानिरुद्धःशशिशेखरोऽसी ॥४३॥

शिवा-अन्वयः—एते सर्वे भटाः पाथोधिम् इव आप्तकोपम् सम्मर्द्दनिरीक्ष्य स्वधनम् विहाय अपलायन्त असी चन्द्रशेखरः क्याचित् स्त्रियानिरुद्धः ।

भावार्थ—सभी वीर समूद्र के समान उमड़ते हुए अत्यन्त कुपित जनसमूह को देखकर अपना धन छोड़कर भाग गये किन्तु ये चन्द्रशेखर किसी स्त्री के ढारा पकड़ लिये गये ।

सा वै प्रगल्भप्रकृतिः प्रगल्भं, वाक्यं रशन्ती वपुषा प्रगलभा ।

उच्छिद्य हस्ताद्रभसा भुशुण्डीं तस्मिन् सरोषा प्रजहारयिति ॥४४॥

शिवा-अन्वय—सा प्रगल्भप्रकृतिः वपुषा प्रगलभा प्रगल्भवावयम् रशन्ती रभसा हस्ताद्र भुशुण्डीं उच्छिद्य सरोषा तस्मिन् यष्टि प्रजहार ।

भावार्थ—वह स्त्री प्रकृति और शरीर दोनों से प्रगल्भ थी वह अशिष्ट वाक्य बोलती हुई आजाद चन्द्रशेखर के हाथ से बलपूर्वक बन्दूक छीनकर उन पर रुट होती हुई लाठी से प्रहार कर बैठी ।

आजन्मतः स्त्रीजनतोतिभीरुनं प्राभवत् तां प्रतिकर्तुमेषः ।

अवेश्य चैतत् सुदृढस्वभावं चक्रः प्रशंसां सुहृदश्च मूरि ॥४५॥

शिवा-अन्वय—आजन्मतः स्त्रीजनतः अतिभीरुः एषःताम् प्रतिकर्तुम् न प्राभवत् च एतत् सुदृढस्वभावम् अवेश्य सुहृदः भूरिप्रशंसाम् चक्रः ।

भावार्थ—जन्म से ही स्त्रीजनों से अत्यन्त भीरु होने के कारण श्री चन्द्रशेखर आजाद उस महिला का कोई प्रतीकार नहीं कर पाये उनके सुदृढ स्वभाव को देखकर मिथ्रों ने बड़ी प्रशंसा की ।

हिसातिपीडाव्यसनं जनानां कृच्छ्रेण साध्यं द्रविणं तथात्पम् ।

विचिन्त्य चास्मिन् सुभद्रस्तर्देव विनिश्चितं कार्यमिदं विहातुम् ॥४६॥

शिवा-अन्वयः—अस्मिन् कार्ये जनानाम् अति पीडाव्यसनम् हिसा च तथा कृच्छ्रेण साध्यम् अल्पम् द्रविणम् इत्थम् सुभट्टः विचिन्त्य इदम् कार्यम् विहातुम् विनिश्चितम् ।

भावार्थ—इस कार्य में लोगों की हिसा, पीड़ा और स्वयं को भी

वहुत बड़ा गहनी पक्की है और बहुत बड़ा रोपन भी थोड़ा ही मिलता है, इस पक्का तिथार वर्ग के प्राचिनिकारियों ने उसी समय इस कार्य को छोड़ने का निर्णय लिया ।

निशम्य कञ्चित्तशेषोखरोऽसौ मठाधिपं रोगवशं तदन्ते ।

भवेत् तदर्थेन दलोपकारस्तस्मात् तदीयः परिचारकोऽभूत् ॥४७॥

शिवा-अन्वयः—असौ शशिशेष्यरः कञ्चित् मठाधिपम् रोगवशम् निशम्य तदन्ते तदर्थेन दलोपकारः भवेत् तस्मात् तदीयः परिचारक अभूत् ।

भावार्थः—चन्द्रशेष्यर ने किसी महन्त को रोगवश सुनकर और यह विचार करके कि इसके मरने पर इसकी सम्पत्ति से सेना का बड़ा उपकार होगा अतः उसके सेवक बन गये ।

नाकारिकालादपि येन भीतिः स एव देशस्य हिताय वीरः ।

वहस्तदीयान् शिरसा निवेशान् उवास मासान् कतिच्चिद् विषणः ॥४८॥

शिवा-अन्वयः—येन कालात् अपि भीतिः न अकारि स एव वीरः देशस्य हिताय तदीयान् निवेशान् शिरसा वहन् कतिच्चित् मासान् विषणः उवास ।

भावार्थः—जो कभी काल से भी नहीं डरे ये वे ही वीर चन्द्रशेष्यर देश के हित के लिए उस महन्त के आदेशों को न तस्मस्तक होकर स्वीकार करते हुःखी मन से कुछ महीनों तक उसकी सेवा में रहे ।

ये लोलुपा: सौधगृहा: सुकेश शमश्वनिक्ता वेदविरुद्धमार्गाः ।

विलासिनो धर्मविद्यातनिष्ठा संन्यासिनस्त्यागरता कलौ ते ॥४९॥

शिवा-अन्वय—ये लोलुपा: सौधगृहा: सुकेशशमश्वता: वेदविरुद्ध-मार्गः विलासिनः धर्मविद्यात् निष्ठा: कलौ ते त्यागरता: संन्यासिनः (कवन्ते इति शेषः) ।

भावार्थः—जो लोग विषयों के लोलुप होते हैं तथा ऊचे-ऊचे महला में निवास करते हैं सुन्दर केश दाढ़ी मूँछ आदि अलङ्कारों से युक्त रहते हैं तथा जिनका मार्ग वेद विरुद्ध होता है इस प्रकार के विलासी धर्मधर्वसी लोगों को ही कलियुग में त्यागी और संन्यासी कहा जाता है ।

अहो स्वधर्मकृत भूरिनिष्ठा: शान्ता: सदाचाररता: सुशीला: ।

श्रुतान्विता धर्मपरा दरिद्रास्त एव सीदन्ति कलौ विष्णना: ॥५०॥

शिवा-अन्वयः—अहो ये जाता व्यधसैकृतभूता भिन्ना जाता गया चारगता: सुशीला: श्रुतान्विता: धर्मपरा ते एव कलौ विष्णा विष्णना: सीदन्ति ।

भावार्थ—अहो खेद है ! जो लोग वेदिकायां में अवगत विष्णा व्यत हैं तथा स्वभाव से शान्त होते हैं एवं वेदिक धर्म से अनुग्रहित राष्ट्राभ्युप करते हैं एवं शास्त्र तथा वेदविहित धर्मनिष्ठान में तत्पर रहते हैं वे ही इस कराल कलिकाल में धनहीन होकर विष्णियों से मारे हुए अनेक प्रकार से कष्ट पाते हैं । (यह उनकी परीक्षा हो तो है)

पाद इतिष्णी—कलौ विष्णनः—इह दुष्टः प्रसीदन्ति कलौ सीदन्ति सज्जनाः अर्थात् कलियुग में कुछ समय के लिए दुष्ट प्रसन्न और सन्त दुःख पाते हैं । परन्तु इसे युगधर्म समझकर सज्जनों को कभी भी अपना वेदिक सनातन मार्ग नहीं छोड़ना चाहिए । अन्ततः जीत सज्जनों की ही होती है । सत्यमेव जयते नासत्यम् ।

प्रतीक्षमाणो मरणं तदीयं जपस्तदर्थं जपमालिकायाम् ।

न्यवतंतासम्भवमाकलय समन्वयभूतं कलिकालनेमिम् ॥५१॥

शिवा-अन्वयः—(स) चन्द्रशेष्यरः तदीयं मरणं प्रतीक्षमाणः जप-मालिकायां तदर्थं जपन् तत् असम्भवं आकलय न्यवर्तत । तं कलिकालने-मिम् च समन्वयभूत् ।

भावार्थ—श्री चन्द्रशेष्यर आजाद उस होंगी महन्त के मरने की प्रतीक्षा करते हुए जपमालिका पर उसी के मरणार्थं जप करते हुए उसका मरण असम्भव मानकर (कुछ समय पश्चात्) लौट आये ।

स्वं राजकीय प्रसभं हरेम यत्प्राणिनां शोषणतोऽस्ति लब्धम् ।

धिक् तद्वनं पापिभिरउर्यमानं राष्ट्रोपकाराय न यद्व्ययः स्यात् ॥५२॥

शिवा-अन्वयः—यत् प्राणिनाम् शोषणतो लब्धम् अस्ति (तत्) राजकीयं स्वं प्रसभं हरेम । पापिभिः अर्यमानं तद धनं धिक् । यद्व्ययः राष्ट्रोपकाराय न स्यात् ।

भावार्थ—(चन्द्रशेष्यर आदि ने विचार किया) कि जो धन प्राणियों के शोषण से प्राप्त हुआ है उस राजकीय अर्थात् त्रिटिश शासन के धन को हम बलपूर्वक लूट क्योंकि पापियों के द्वारा इकट्ठे किये गये उस धन को धिक्कार है जिसका राष्ट्र के उपकार के लिए व्यय नहीं होता ।

विचिन्त्य चेत्यं हृदि देशभक्ता रामप्रसादमुखाः सरोपाः ।

उत्साहयमानाः शशिशेखरेण काकोरिनामस्थलमभ्यगच्छन् ॥५३॥

शिवा-अन्वयः—इत्थं च हृदि विचिन्त्य रामप्रसाद प्रमुखाः सरोपाः देशभक्ताः जशिशेखरेण उत्साहयमाना काकोरिनामस्थलम् अभ्यगच्छन् ।

भावार्थ—अब इस प्रकार हृदय में विचार करके श्री चन्द्रशेखर आजाद के द्वारा उत्साहित हुए कुद्द श्री रामप्रसाद विस्मिल आदि क्रान्तिकारी देशभक्त काकोरी नामक स्थल पर आये ।

टिप्पणी—‘काकोरी’ उत्तर प्रदेश के गोरखपुर शहर के निकट का एक प्रसिद्ध स्थान है जहाँ क्रान्तिकारियों ने राजकीय कोष लूटा था ।

अर्थकदारहृष्ट च वाष्पयानं निरोध्य यन्त्रेण गति तदीयाम् ।

मञ्जूषिकां लोहमयेन भित्वा कोषं लुलुण्ठः खलु शासकीयम् ॥५४॥

शिवा-अन्वयः—अब एकदा च (ते) वाष्पयानम् आरहृष्ट तदीयां गति यन्त्रेण निरोध्य लोहमयेन मञ्जूषिकां भित्वा राजकीयं कोषं लुलुण्ठः खलु ।

भावार्थ—अनन्तर एक दिन उन क्रान्तिकारी वीरों ने रेलगाड़ी में चढ़कर जंजीर खीचकर रेलगाड़ी को रोककर सरकारी तिजोरियों को लोहे के छड़ों से तोड़कर समस्त राजकीय कोष लूट लिया ।

सान्ध्ये तमष्टोमसमावतासु काष्टासु भानी जलधी विलीने ।

अन्तर्हितास्ते सुभटाः निकुञ्जे शेकुर्यहीतुं पुरुषा न यत्नः ॥५५॥

शिवा-अन्वयः—सान्ध्ये काष्टासु तमस्तोमसमावतासु भानी जलधी विलीने ते सुभटाः कुञ्जे अन्तर्हिताः । पुरुषाः यत्ने गृहीतुं न शेकुः ।

भावार्थः—वह समय सन्ध्या का था अतः सभी दिशाएँ गहन अन्धकार से धिरी हुई थीं । इस परिस्थिति का सदुपयोग करते हुए वीर क्रान्तिकारी राजकीय धन लूटकर पास के जंगल की झाड़ियों में छिप गये । अनेक प्रयास करके भी अंग्रेज संनिक उन्हें पकड़ नहीं सके ।

देशे समस्ते प्रससार वृत्तं सर्वेषु पत्रेषु च पत्रिकासु ।

प्रकाशितं तैलवदम्भसीदं काकोरिकाण्डेत्यभिधानमाशु ॥५६॥

शिवा-अन्वयः—अभ्यसि तैलवत् जाशु समस्ते देशे काकोरिकाण्डेत्यभिधानम् इदं वृत्तं प्रससार सर्वेषु पत्रेषु पत्रिकासु च प्रकाशितम् ।

भावार्थः—जल में तेल की भाँति अतिशीघ्र काकोरीकाण्ड नाम से यह वन्नान्त सम्पूर्ण देश में फैल गया तथा सभी समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ ।

(६५)

ज्ञात्वादम्य पराक्रमान् नरहरोन् क्रान्ती रतान् सुव्रतान् ।

सक्रोधं विटिशाल्य शासनमथो तान्नियहीतुं बलात् ।

यावद् भूधरजांघियावितमही माशैल राजाद् वश्य ।

देशे राजनृणां ततान् निखिले जालं जडव्याधवत् ॥५७॥

शिवा-अन्वयः—अब क्रान्ती रतान् सुव्रतान् नरहरीकृ अदम्य पराक्रमान् ज्ञात्वा तान् बलात् नियहीतुं सक्रोधं विटिशाल्य शासनम् आशैल-राजात् भूधरजांघियावितमहीं यावत् निखिले देशे जडव्याधवत् राजनृणां हठं जालं ततान् ।

भावार्थः—इसके पश्चात् क्रान्ति में तत्पर स्वतन्त्रता के श्रेष्ठ व्रत से सम्पन्न उन नरकेसरी वीर पुरुषों को अदम्य पराक्रम से युक्त जानकर उन्हें बलपूर्वक बन्दी बनाने के लिये अत्यन्त कुद्द विटिश जासन ने हिमालय से कन्याकुमारी पर्यन्त सम्पूर्ण भारत देश में निर्मम बहेलिये की भाँति पुलिस का एक सुदृढ़ जाल बिछा दिया ।

टिप्पणी—भूधरो हिमालयः तस्मात् जाता भूधरजा, कन्याहपिणी पार्वती तस्या अंघियां चरणाभ्यां पाविता पवित्रीकृता या मही भूमिः तां भूधरजांघियावितमहीम् कन्याकुमारीम् इति भाव ।

भगवती पार्वती जी ने दधिण में समुद्रतट पर भगवान शिव को पाने के लिये कुमारी कन्या का वेश धारण करके उत्तप किया था । अतः आज भी उस स्थान को कन्याकुमारी कहते हैं । वही भारत की दधिणी सीमा भी है । इसी कारण ‘काश्मीर से कन्याकुमारी’ यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है ।

ये ये नियुक्ताः पुरुषाः गृहीता निरागसः क्रान्तिरताः सपत्नैः ।

संयोजित तेषु कठोरदण्डं कारादिकं दारणताडनञ्च ॥५८॥

शिवा-अन्वयः—ये ये निरागसः पुरुषाः नियुक्ताः क्रान्तिरताः सपत्नैः गृहीता तेषु दारणताडनम् कारादिकं च कठोरदण्डम् संयोजितम् ।

भावार्थः—जो जो क्रान्तिकारी महापुरुष निरपराध होने पर भी अंग्रेजों द्वारा पकड़े गये उन पर कठोर बेतों का प्रहार जेल और आदि निर्मम दण्डों की व्यवस्था की गयी ।

रामप्रसादप्रमुखास्तथाभ्ये ये वै सहाया जशिशेखरस्य ।

ते जीर्णवासोवदमन्दहर्षाः जहुः शरीरं गलबन्धतीयेऽ ॥५९॥

शिवा-अन्वयः—तथा अन्ये रामप्रसादप्रमुखाः ये जशिशेखरस्य सहायाः ते अमन्दहर्षाः गलबन्धतीयेऽ जीर्णवासोवत् शरीरम् जहुः ।

भावार्थः—और जो रामप्रसाद आदि श्री चन्द्रशेखर के अन्य सहायक

(६६)

थे उन्होंने गलबन्ध यानी (फाँसी) रूप तीर्थ में अपने जोग शरोर को जोग वस्त्र के समान छोड़ दिया ।

न भक्तसिंहं विद्युतेष्वरच्च धमा ग्रहीतुं रिपवः सयत्नाः ।

अनुक्षणं तौ परिचिन्तयन्तः कृत्स्नं जगत् तन्मयमन्यपश्यन् ॥६०॥

शिवा-अन्वयः—सयत्नाः रिपवः भक्तसिंहम् च विद्युतेष्वरम् ग्रहीतुम् न धमा । अनुक्षणम् तौ परिचिन्तयन्तः कृत्स्नम् जगत् तन्मयम् अभ्यपश्यन् ।

भावार्थ—अंग्रेज शत्रु प्रयास करके भी भगतसिंह और चन्द्रेष्वर को नहीं पकड़ पाये, वे निरन्तर इन दोनों का चिन्तन करते हुए सम्पूर्ण जगत को ही भगतसिंह और चन्द्रेष्वर के रूप में देखने लगे ।

उपरतेषु सुहृत्सु महामना सुभट्टराजगुरु प्रमुखेष्वयम् ।

बहु शुशोच विलोचनवारिभिः कृतमृतप्रियवान्धवतर्पणः ॥६१॥

शिवा-अन्वयः—सुभट्टराजगुरु प्रमुखेषु सुहृत्सु उपरतेषु विलोचनवारिभिः कृतमृतप्रियवान्धवतर्पणः बहु शुशोच ॥

भावार्थ—राजगुरु आदि अपने प्रिय मित्रों के समाप्त हो जाने पर महामना चन्द्रेष्वर अपने आंसुओं से मृत बान्धवों का तर्पण करके बहुत शोकाकुल हो गये ।

टिप्पणी—कृतं मृतानां प्रियाणां बाधवानां तर्पणयेन सः कृतमृतप्रियवान्धवतर्पणः । इति विलभितवृत्तम् ।

अथ विधे भवता किमभीप्स्यते गतदयेन यदप्रियकारिणा ।

विमलभारतभाग्यनवेन्द्रवः सपदि हा प्रसिता रिपुराहुभिः ॥६२॥

शिवा-अन्वयः—अथ विधे गतदयेन अप्रियकारिणा भवता किम् अभीप्स्यते । यत् विमलभारतभाग्यनवेन्द्रवः रिपुराहुभिः सपदि प्रसिता हा ।

भावार्थ—हे विधाता दयालून्य एवं अप्रिय करनेवाले आप क्या चाह रहे हैं । क्योंकि निर्मल भारत भाग्याकाश के अनेक नये नये चन्द्रमाओं को आपने अंग्रेज रूप राहुओं द्वारा ग्रसवालिया ।

टिप्पणी—ग्रसनं ग्रसः पचादित्वात् अच् । ग्रसं आचष्टे करोति अन्तर्भावितप्यन्तत्वात् कारयति इति ग्रसयति तेन अग्रस्यन्त इति ग्रसिताः । यद्वा-ग्रसं ग्रासम् इता इति ग्रसिताः । आकृतिगणत्वेन शकन्धवादित्वात् परस्परम् ।

अहह विस्मिलवंशदिवाकर ! बहु यवं भवता परिशक्तिः ।

कथय पूर्वमपास्य कथं हि तो विद्यमागा जनता न समुद्धृता ॥६३॥

शिवा-अन्वयः—अहह विस्मिलवंशदिवाकर ! भवता यवं यात् परिशक्तिः कथय पूर्वं न अपास्य दिवं कथं अगा जनता न समुद्धृता ।

भावार्थ—हे विस्मिल वंश के सूर्य आपके द्वारा हमें बहुत शिक्षा दी गई, कहिये हमें पहले छोड़कर स्वर्ग क्यों ले गये अभी जनता का उदार नहीं हुआ । अर्थात् अभी परतन्त्रता शेष ही है ।

अहह मित्रगणो भवतः पृथक् कथमहं प्रविभभि निजानसून् ।

प्रियतमं च फणीव मणिं विना विकलमीन इवाम्बुद्धियोजितः ॥६४॥

शिवा-अन्वयः—अहह मित्रगणः अहं भवतः पृथक् प्रियतमम् मणिं-विना फणीइव अम्बु नियोजितः विकल मीनः इव निजान्असून् कथम् प्रविभभि ।

भावार्थ—हे मित्रगणो परम प्रिय मणि के विना सर्वे के समान जल से विद्युदी हुई मछली की भाँति मैं आप लोगों से विछुड़कर अपने प्राणों को कैसे धारण करूँगा ।

खलसपत्नशरीरसमुच्छलच्छुरितशोणितशोणधरातले ।

नहि ददे भवताऽऽच्च तिलाऽऽजलि सपदि चेन्न तदा सुहृदां कृती ॥६५॥

शिवा-अन्वयः—खलसपत्नशरीरसमुच्छलच्छुरितशोणितशोणधरातले यदि भवताम् तिलाऽऽजलि सपदि नहि ददे चेत् तदा सुहृदाम् अहम् न कृती ।

भावार्थ—दुष्ट शत्रुओं के शरीर से निकलते हुए तीक्ष्ण रक्त से लाल इस पृथ्वी पर यदि मैंने आप लोगों को अति श्रीद्व तिलाऽऽजलि नहीं दी तो मैं आप लोगों का कृतज्ञ नहीं ।

इति शुचं विगणय्य सुहृतपरां धृतिनिधिर्हनुमानिव साहसी ।

जनकजामिव शत्रुकरे गतां स्ववसुधां परिमोक्तुमचेष्टत ॥६६॥

शिवा-अन्वयः—इति सुहृत् पराम् शुचम् विगणय्य धृतिनिधिर्हनुमान् इव साहसी जनकजाम् इव शत्रुकरे गताम् स्ववसुधाम् परिमोक्तुम् अचेष्टत ।

भावार्थ—इस प्रकार धैर्यवान चन्द्रेष्वर अपने मित्र शोक को द्वाकर हनुमान जी की भाँति अपूर्व साहस धारण कर सीताजी के समान,

शत्रु भैरवों के हाथ में गांगी हृष्टे भगवान् मातृभूमि को मुक्त करने की चेष्टा
मर्ही लगे ।

पुत्ररथं प्रणिधाय मनः सुधी कटकसंघटनेन यथाक्रमम् ।

अरिविरुद्धसमस्तदलस्य वै समभवत् स्वबलेन चमूपतिः ॥६७॥

शिवा-अन्वयः—पुनः अयम् सुधीः प्रणिधाय यथाक्रमम् कटक-
संघटनेन स्वबलेन अरिविरुद्धदलस्य चमूपतिः समभवत् ।

भावार्थ—सुन्दर चेतनशील चन्द्रशेखर अपने मन को फिर में वज्ञ
में करके कमानुसार संख्य संघटन एवं अपने अलैकिक पराक्रम से अंग्रेजों
के विरुद्ध संघटित त्रान्तिदल के सेनापति बन गये ।

अनुनिमेषमरिष्टनरर्थमैः परिवृतः स्वगणैदुङ्डुनिष्ठव्यैः ।

खलबधव्यसनी स्वगुणंरसायनुचकार मुदा शशिशेखरम् ॥६८॥

शिवा-अन्वयः—असौ अरिष्टनरर्थमैः दुङ्डुनिष्ठव्यैः स्वगणैः परिवृतः
खलबधव्यसनी स्वगुणैः अनुनिमेषं मुदा शशिशेखरं अनुचकार ।

भावार्थ—गव्यानाशक नश्व्रेष्ठ तथा दृढ़ निष्ठव्य वाले अपने मित्रों
से घिरे हुए वे श्री चन्द्रशेखर दुष्टों के बधलप व्यसन को स्वीकार करके
प्रसन्नता से निरन्तर भगवान् चन्द्रशेखर शिव का अनुकरण करने लगे ।

विधिरिवेहितनूतनसूष्टिको हरिरिवातमभुवं च रिरक्षिषुः ।

हर इवारिलये कृतनिश्चयस्त्रिमुरतां समयात्स्वगुणंरथम् ॥६९॥

शिवा-अन्वयः—अयम् (चन्द्रशेखरः) विधिः इव ईहितनूतनसूष्टिकः
च हरिः इव आत्मभुवं रिरक्षिषुः हरः इव अरिलये कृतनिश्चयः स्वगुणैः
त्रिमुरतां समयात् ।

भावार्थ—वे श्री चन्द्रशेखर ब्रह्मा की भाँति नयी सूष्टि की कल्पना
करके, विष्णु की भाँति भारत भूमि की रक्षा के इच्छुक होकर, शंकर की
भाँति शत्रुओं के प्रलय का दृढ़ निष्ठव्य धारण करके अपने ही गुणों से
ब्रह्मा, विष्णु, शंकर इन त्रिदेवों का गुण धर्म प्राप्त कर रहे थे ।

कपटवेशकुद्भूतसाहसे रिपुगणैरनवेक्षितचेष्टितः ।

परिनिविश्य गुहागिरिकन्दराः स विच्चार परिक्षजतावरः ॥७०॥

शिवा-अन्वयः—सः परिव्रजताम् वरः कपटवेषकुत् अद्भूतसाहसः
रिपुगणैः अनवेक्षितचेष्टितः गुहागिरिकन्दराः परिनिविश्य विच्चार ।

भावार्थ—वे चन्द्रशेखर परिव्राजकों में थेष्ट सन्त की भाँति अद्भूत

साहसी होकर गोपनीय वेष में पात्रों से भगवान् भैरवों को निपाकर
अनेक पर्वत की गुफाओं और फलदाराओं में लिपते हुए विच्चार करते
लगे ।

स ब्रह्मचर्यवृद्धतेजाः काषायवासा फलमूलसेवी ।

कमण्डलुः चारुजटां दधानः परन्तपो भार्गववद्वभूव ॥७१॥

शिवा-अन्वयः—सः ब्रह्मचर्यवृद्धतेजाः काषायवासा फलमूलसेवी
कमण्डलुम् चारुजटां दधानः भार्गववत् परन्तपः वभूव ।

भावार्थ—वे चन्द्रशेखर ब्रह्मचर्यवृत से दिव्यतेज सम्पन्न एवं काषाय-
वस्त्रधारी तथा फलमूल का सेवन करके कमण्डलु और थेष्टजटाको
धारण करते हुए भगवान् परशुराम के समान शत्रुओं के उत्पीडक हो
गये ।

गोरप्रभो गौरबधवतश्च विशालवाहुः परिपीनवक्षाः ।

सुमांसलांसो नवपङ्कजास्यो रेजे यथा वीररसः शरीरी ॥७२॥

शिवा-अन्वयः—सः गौरप्रभः गौरबधवतः विशालवाहुः परिपीन-
वक्षाः सुमांसलांसः नवपङ्कजास्यः शरीरी वीररसः यथा रेजे ।

भावार्थ—चन्द्रशेखर का वर्ण गौर था और गौराङ्ग अंग्रेजों के बध
का उन्होंने ब्रत लिया था । उनकी भुजाएँ विशाल तथा वक्षस्थल मोटा
था वे मांसल स्तन्ध एवं नवीन कमल मुख वाले युवक थेष्ट, शरीर
धारण किये हुए वीररस के समान मुशोभित हो रहे थे ।

मांसं मदो द्यूतरतिविहारः स्त्रीसङ्गमो नृत्यकलाण्डभोगः ।

एकोऽपि दोषः शशिशेखरस्य छायामपि स्प्रष्टुमहो न शेके ॥७३॥

शिवा-अन्वयः—अहो मांसम् मदः द्यूतरतिविहारः स्त्रीसङ्गमः नृत्य-
कला अण्डभोगः एकः अपि दोषा शशिशेखरस्य छायाम् अपि स्प्रष्टुः न
शेके ।

भावार्थ—अहो आश्चर्य है । मांस, मद, द्यूत, रति, विहार, स्त्रीस-
मागम, नाच, गाना, अण्डभोग इनमें से कोई भी एक दोष श्री चन्द्र-
शेखर आजाद की छाया को भी नहीं छू सका ।

सवेत्रवत्या सरितः सुतीरे वानीरमुख्यस्तरभिनिर्गृहे ।

चकार रम्यां निजपर्णशालां स्वतन्त्रतादैवतदत्तचित्तः ॥७४॥

शिवा-अन्वयः—स्वतन्त्रतादैवतदत्तचित्तः सः वानीरमुख्यैः तरभिः
निर्गृहे वेत्रवत्याः सुतीरे रम्यां निजपर्णशालां चकार ।

भावार्थ— वेतवा देवी में अपना चित्त लगाकर आजाद श्री चन्द्र-
ण्डर ने वेत आदि वृक्षों से घिरे हुए वेतवा नदी के किनारे अपनी सुन्दर
पर्णशाला बनायी।

अनुक्षणं देशहिताय यत्नान् विचिन्तयन् मारुतिपादवद्मम् ।
समर्चयन् गूढवपुविनेष्यन् निनाय मासान् कतिचित् स बालान् ॥७५॥

शिवा-अन्वयः— सः देशहिताय अनुक्षणम् यत्नान् विचिन्तयन्
मारुतिपादवद्मम् समर्चयन् गूढवपुः बालान् विनेष्यन् कतिचित् मासान्
निनाय।

भावार्थ— अब आजाद श्री चन्द्रशेखर गुप्तवेश में रहकर निरन्तर
देश के हित के लिये चिन्तन करते हुए हनुमान जी के चरण कमल की
सेवा करते हुए बालकों को देव धर्म की शिक्षा देते हुए वेतवा के तट पर
ही कुछ महीने विताये।

अथेकदा संसदि वायसस्य निपात्य रिप्तोटकमुप्रपातम् ।

जहार दर्प रिपुकुञ्जराणां स भवतसिहस्तहणप्रतापः ॥७६॥

शिवा-अन्वयः— अथ एकदा वायसस्य संसदि तरुण प्रतापः भवत-
सिहः उप्रपातम् विस्फोटकम् निपात्य रिपुकुञ्जराणां दर्पं जहार।

भावार्थ— इसके अनन्तर एक बार वायसराय की संसद में तरुण
प्रतापी सिह के समान प्रतापवान भगतसिह ने भयहूँर वर्म गिराकर शत्रु-
रूपी हथियों का गवं चूणीं कर दिया।

तैः प्राणदण्डं समधोपितस्य सन्तोष्य सर्वान् सुहृदः कुटुम्बम् ।

वक्तुं व्यथां भारतवासिनां वै मुदा सुरेन्द्रस्य सभासदोऽभूत ॥७७॥

शिवा-अन्वयः— तैः तस्य प्राणदण्डम् समधोपितस्य सः सर्वान्
सुहृदः कुटुम्बम् सन्तोष्य भारतवासिनाम् व्यथां वक्तुं सुरेन्द्रस्य सभासदः
अभूत ।

भावार्थ— अंगेजों ने भगतसिह को फांसी की सजा सुनाई वे अपने
मित्रों एवं परिवार को आशवासन देखकर प्रसन्नता पूर्वक वेतवाओं को
भारतवासियों की व्यथा सुनाने के लिये इन्द्र के सभासद बन गये अर्थात्
हैंसते-हैंसते सूली पर लटक गये।

सहयो मते साहसधर्मशीले मुहूर्तमासीद् विमना मनस्वी ।

भूयो विर्बेदेन विधूयशोकं संघटं तौवरगतिं व्यधत्त ॥७८॥

शिवा-अन्वयः— साहसधर्मशीले सख्योमृते स मनस्वी मुहूर्तम् विमना
आसीत्, भूयः विवेकेन शोकम् विधूय स्वं संघटं तीव्रगतिं व्यधत्त ।

भावार्थ— साहस और धर्म के पृच्छ मित्र भगतसिह के फांसी पर
लटक जाने पर मनस्वी श्री चन्द्रशेखर मुहूर्त भर अनमने से रहे फिर
विवेक से मित्र शोक को समाप्त करके तीव्रता से सेना का संघटन करने
लगे।

ज्ञांसी समीपे कृतनंजवासो बालान् समाहृय कथाच्छ्लेन ।

प्रशिक्षयन् वैरिवधप्रयत्नान् प्रावाहयद् वीररसं समत्र ॥७९॥

शिवा-अन्वयः— ज्ञांसो जनीपे कृतनंजवासः बालान् समाहृय कथा-
छ्लेन वैरिवधप्रयत्नान् प्रशिक्षयन् समत्र वीररसम् प्रवाहयत् ।

भावार्थ— ज्ञांसी के समीप निवास करके कथा के बहाने से सभी
बालकों को बुला-बुलाकर शत्रु के वध के उपायों की शिक्षा देते हुए
आजाद जी ने सब और वीर रस प्रवाह को प्रवाहित कर दिया।

स वाष्पयानीयनियन्त्रकार्यं कृत्वा स्वशस्त्राभ्यसनादिभिरुच ।

देशोऽचिराद् गूढवपुः समरते पुनः स्वसंन्यं विपुलीचकार ॥८०॥

शिवा-अन्वयः— सः गूढवपुः वाष्पयानीय नियन्त्रकार्यम् कृत्वा स्व-
शस्त्राभ्यसनादिभिः समरते देशे अचिरात् पुनः स्वसंन्यम् विपुली चकार ।

भावार्थ— श्री चन्द्रशेखर जी ने कुछ दिन मोटर ड्राइवीं का काम
करके अपने अस्थ्र-शस्त्र के अभ्यासों द्वारा अति शीघ्र ही गुप्त वेष में रहते
हुए भी समस्त देश में अपनी क्रान्ति सेना को विशाल बना लिया।

तं पञ्चवाणोऽपि महेश्वरांशो ज्ञात्वाबलातीणकटाक्षवाणैः ।

स्वप्नेऽपि सत्कान्तिसमाधिनिष्ठं मःये न शोके सभयो विकर्तुम् ॥८१॥

शिवा-अन्वयः— मन्ये पञ्चवाणः अपि तम् महेश्वरांशम् ज्ञात्वा
स्वप्ने अपि सत्कान्तिसपाविनिष्ठम् अबलाकटाक्षवाणैः सभया विकर्तुम्
न शोके ।

भावार्थ— ऐसा मानता हूँ कि साक्षात् कामदेव भी श्री चन्द्रशेखर
को शंकर भगवान् का अंश जानकर डरकर स्वप्न में भी क्रान्ति की समाधि
में निष्ठ आजाद जी को नारियों के नयन कटाक्ष वाणों से विकृत नहीं कर
सका।

स कस्यचित् शत्रियपुञ्जवस्य उवास गेहे बटुवेशधारी ।

अनुक्षणं देशहितं विचिन्त्वन् एकान्तसेवी यमिनां वरिष्ठः ॥८२॥

शिवा-अन्वयः—सः यमिनाम् वरिष्ठः वटुवेणश्वारी अनुक्षणम् देण-
हितम् विचिन्वन् एकान्तसेवो कस्यचित् क्षत्रियपुङ्गवस्य गेहे उवास ।

भावार्थः—संयमियों में श्रेष्ठ आजाद श्रीचन्द्रशेखर एकान्तवास की दृष्टि से वटु का वेश बनाकर निरन्तर देश हित का चिन्तन करते हुए किसी श्रेष्ठ क्षत्रिय के भवन में एकान्तवास कर रहे थे ।

तत्रास्तंकाकुटिलहृदया भग्नसिन्दूरचर्चा ।
योविष्मूढाप्रकृतिचपला भ्रूविलासे विदग्धा ॥
सा सौन्दर्यातिशयभवनं शेखरं वीक्ष्य कान्तम् ।
कामर्त्तिभूद्रविमणिरिवालोक्य कोकाधिनाथम् ॥८३॥

शिवा-अन्वयः—तत्र कुटिलहृदया भग्नसिन्दूरचर्चा प्रकृति चपला भ्रूविलासे विदग्धा एका मूढा योषित आस्त, सा सौन्दर्यातिशय भवनम् कान्तम् शेखरम् वीक्ष्य कोकाधिनाथम् आलोक्य रवि मणिः इव कामाती अभूत् ।

भावार्थः—उस क्षत्रिय के भवन में कुटिल हृदय वाली प्रकृति से चब्बल भ्रकुटि विलास में नियुण एक मूर्ख विधवा स्त्री रहती थी । वह असीम सुन्दरता के भवन श्री चन्द्रशेखर को निहार कर सूर्यनारायण को देखकर सूर्यकान्तिमणि की भाँति कामाती हो गयी ॥

यत्प्रासादे स्मरनति मुदा शेखरः शान्तमुद्रः ।
सान्ध्येकाले व्यथितहृदया कामिनी सा कदाचित् ॥
मन्दं गत्वा तममलरुचि चाहचारिद्यमूर्तिम् ।
स्थित्वा पश्चाच्चलकलहशा मोहयन्तीव भावः ॥८४॥

शिवा-अन्वयः—यत् प्रासादे सान्ध्ये काले शान्तमुद्रः मनति स्म तत्र कदाचित् व्यथितहृदया सा कामिनी मन्दं गत्वा पश्चात् स्थित्वा चलकलहशा तम् अमलरुचि भावः मोहयन्ती इव ।

भावार्थः—जिस अद्वालिका पर आजाद श्री चन्द्रशेखर प्रतिदिन सन्ध्या के समय शान्तमुद्रा में चिन्तन करते थे । वहीं पर किसी समय वाम पीड़ा से व्यथित हृदय वह कामिनी धीरे-धीरे जाकर पीछे खड़े होकर अपने चब्बल चितवन और हाव भाव से उस निम्नल प्रकाश से सम्पन्न चरित्रमूल महापुरुष को मोहित करने का प्रयास करने लगी ।

वर्णी यर्षी कमनवपुर्व कोटिकान्तम् ।
शान्तं दान्तं कुटिलमयना कामभानस्वरातो ॥
तं प्रावोचत् सुमधुरगिरा भवहासं च हृष्टा ।
किन्नो स्वैरं तरुण रमसे पञ्चजास्या मया त्वम् ॥८५॥

शिवा-अन्वयः—कमनवपुर्व कोटिकान्तम् शान्तम् दान्तम् तम् दर्शी दर्शी कामभानस्वरा कुटिल नयना आर्ता मनदहासम् कुत्वा सुमधुर गिरा प्रावोचत्, तरुणपञ्चजास्या मया त्वम् स्वैरम् किन्नो रमसे ।

भावार्थः—कमनीय शरीर वाले कोटि-कोटि कामदेव के समान सुन्दर अत्यन्त शान्त और संयमी आजाद श्री चन्द्रशेखर को बार-बार अपनी चब्बल चितवन से निहालकर वह आतं कामिनी काँपती हुई स्वर में मन्द-मन्द मुस्कुराती हुई सुमधुर वाणी से बोली है युवक मुझ कमल-नयनी के साथ तुम स्वच्छन्दता पूर्वक क्यों नहीं रमण कर रहे हो ।

इति निगदितवत्यां बद्धनिवंचित्कायाम् ।
स्मरसदविहतायां योषिति प्राकृतायाम् ॥
हरिण इव सभीतः पाशवत्याः किरात्याः
शटिति किल चुकूर्वं शेखरोऽसावधस्तात् ॥८६॥

शिवा-अन्वयः—इतिवद्धनिवंचित्कायाम् स्मरसदविहतायाम् प्राकृतायाम् योषिति निगदितवत्याम् असीमेखरः पाशवत्याः किरात्याः हरिणः इव अधस्तात् शटिति चुकूर्वेकिल ।

भावार्थः—इस प्रकार हठ करती हुई काम के वाणों से पीड़ित सामान्य दुष्ट स्त्री के रति अनुरोध करने पर जाल हाथ में ली हुई किरातिनी से डरे हुए हरिण की भाँति श्री चन्द्रशेखर जो शीघ्र ही छत से नीचे कूद पड़े ।

अतिविकलमनष्कः क्षत्रियापाच्चक्षे ।
युवति विहितमेतत् दुञ्जलं दुष्प्रधर्षः ॥
निजचरितशितिम्ना भाष्यान् भारतीयान् ।
तृणमिव सपुनस्तत् गेहमुञ्जाम्बूद्व ॥८७॥

शिवान्वयः—दुष्प्रधर्षः सः अतिविकलमनष्कः एतत् युवति

विहितम् दुष्कृतम् धत्रियाय आचरक्षे पुनः निजचरितजितिमा भारती-
यान् भावयन् तृणम् इव तद् रेहम् उज्जाम् वभूव ।

भावार्थ—किसी के द्वारा न डिगाये जाने वाले थी चन्द्रजेखर ने
अत्यन्त व्याकुल भाव में दुष्ट नारी के किंवदं कुकर्म को धत्रिय से कह
मुनाया । और अपने चरित्र की धवलिमा से भारतीयों को प्रकाशित करते
हुये तृण के समान उस घर को छोड़कर चले गये ।

अथ भवनमुपेत्य ब्रह्मचर्यतस्य ।

हृदयनिहितरामस्याऽजनेयस्थ वीरः ॥

सलिलकलितनेत्रो भवितसंहृष्टरोमा ।

सरसमृदुलवाचा प्राञ्जलिर्भविते स्म ॥८८॥

शिवा-अन्वयः—अथ ब्रह्मचर्यतस्य हृदयनिहितम् रामस्य आञ्ज-
नेयस्य भवनम् उपेत्य वीरः सलिलकलितनेत्रः भक्तिसंहृष्टरोमा सरस
मृदुलवाचा प्राञ्जलिः भावते स्म ।

भावार्थ—तत्पश्चात् ब्रह्मचर्यतस्य में परिनिष्ठित हृदय में श्री राम
जी को विराजमान कराये हुए अञ्जनानन्दवधीन थी हनुमान जी के
मन्दिर में आकर वीर श्री चन्द्रजेखर अथूपूरित नेत्र एवं रोमाञ्चित शरीर
होकर मृदुल और सरस वाणी से हाथ जोड़कर दोले ।

जयति जनकजाया कुम्भजः शोकसिन्धो ।

रघुपतिपदपथ्यस्तचेतो द्विरेकः ॥

असुरकुलपतञ्ज्वातदोदृष्टवहिनः ।

कनकगिरिसमाभो वायुसूनुः कपीन्द्रः ॥८९॥

शिवा-अन्वयः—जनकजाया: शोकसिन्धो कुम्भजः रघुपतिपदपथ-
न्यस्तचेतो द्विरेकः असुरकुलपतञ्ज्वातदोदृष्टवहिनः कनकगिरिसमाभः
वायुसूनुः कपीन्द्रः जयति ।

भावार्थ—जानकी जी के शोक समुद्र को सुखाने के लिये कुम्भज
के समान श्री राम के चरणकमल में मंडराते हुए मन मधुकर वाले राक्षस
कुलरूप पतञ्जीं के समूह के लिए जिनका भुजदण्ड ही अग्नि है । ऐसे
स्वर्ण के पर्वत के समान वायुपुत्र हनुमान जी की जय हो ।

वरद यदि परेशो रामचन्द्रस्त्वदीयम् ।

गुणगणमभिवक्तु नैव शोके प्रमेयम् ॥

तदहमतिविमूढो पामरः किं गृणीय ।
तद्व गुणगणमाणं क्षम्यतां धार्ष्ट्यमेतत् ॥९०॥

शिवा-अन्वयः—हे वरद यदि परेशः रामचन्द्रः त्वदीयम् अप्रमेयम्
गुणगणम् अभिवक्तुम् नैव शोके, तत् अहम् अति विमूढः पामरः तद्व गुण-
गणिमाणम् किम् गृणीय एतत् धार्ष्ट्यम् क्षम्यताम् ।

भावार्थ—हे वरदान देने वाले प्रभु यदि आपके अप्रमेय गुणगणों को
परात्पर ब्रह्म श्री राम नहीं कह सके तो अत्यन्त मूर्ख पामर व्यक्ति मैं
आपके गुणगणों को कैसे कहूँ, यह धूष्टता क्षमा की जाय ।

महाबाही राही रिपुकटकादम्बवशशिनः,

कपीशो हर्यक्षेशवद्वदन वंशालयकरिणः ।

लसत् चित्तारामे जनकतनया प्राणपतिना,

विलोलल्लाङ्गुले हनुमति मतिः स्याद्रतिमती ॥९१॥

शिवा-अन्वयः—महाबाही रिपुकटकादम्बवशशिनः राही कपीशे
दशवदनवंशालयकरिणः हर्यक्षे जनकतनया प्राणपतिना लसत् चित्तारामे
विलोलल्लाङ्गुले हनुमति (मे) मतिः रतिमती स्यात् ।

भावार्थ—महाबाहु एवं शत्रुकटक समूहरूपचन्द्र को ग्रसने के लिए
राहु तथा वानरों के ईश्वर, राघव के वंशरूप मत्तगजेन्द्र को विघटित
करने के लिए परमप्रतापी रिहूरूप, जनकतनया श्री सीता जी के प्राण-
पति श्री राघवेन्द्र द्वारा जिनके चित्तरूप उद्यान की शोभा बढ़ रही है
ऐसे कुछ हिलते हुए लाङ्गूल (पूँछ) वाले श्री हनुमान जी में मेरी वृद्धि
भक्तिमती हो ।

प्रदेया भवितमै रघुपतिपदावजे सुविकला,
निधेया शत्रुणामभिभवकरी शक्तिरनधा ।

न हेया ते भूमिनिजचरणपूता कपिपते,

विधेया देशोऽस्मिन् परकरणते कापि करणा ॥९२॥

शिवा-अन्वयः—मे रघुपतिपदावजे सुविमला भक्ति प्रदेया । शत्रु-
णाम अभिभवकरी अनवा शक्तिः निधेया । हे कपिपते ! निजचरणपूता
भूमिः न हेया । परकरणते अस्मिन् देशे कापि करणा विधेया ।

भावार्थ—हे कपिपते ! श्रीराम के चरण कमलों में मुझे भक्ति
प्रदान करें । तथा शत्रुओं का नाश करने वाली निष्पाप शक्ति मुझमें

सन्निहित करें। अपने चरणों से हवित्र इस भारतभूमि को कभी न छोड़ एवं शत्रु के हाथ में गये हुए इस देश पर अपूर्व कहणा करें।

इति वारिमरभितुष्टवायुसुतो, विधुशेखर आत्मबलाम्बुनिधिः ।

शमयन् समयं सनिनाय रिवून्, दमयन् दनुजेप्सित घोरभयम् ॥६३॥

शिवा-अन्वयः—इति वारिमिः अभिष्टुत वायुसुतः आत्मबलाम्बुनिधिः विधुशेखरः स रिवून् दमयन् दनुजेप्सित घोरभयम् समयं शमयन् निनाय ।

भावार्थ—इस प्रकार वाणी से वायुपुत्र हनुमान जी की स्तुति करके आत्मबल के समुद्र श्रीचन्द्रशेखर शत्रुओं का दमन करते हुए राक्षसों के द्वारा अभीष्ट घोरभययुक्त अर्थात् प्रदोषकाल के समय को विता दिया ।

रमयन् मनुजान् दमयन् दनुजान्

गमयन् सुमुदं शमयन् विपदम् ।

असयन् कुजनान् सुखयन् सुजनान्

जनयन् जनताप्रियता शुशुभे ॥६४॥

शिवा-अन्वयः—मनुजान् रमयन्, दनुजान् दमयत्, सुमुदं गमयन् विपदं शमयन् कुजनान् असयन्, सुजनान् सुखयन् जनता प्रियता जनयन् शुशुभे ।

भावार्थ—मनुष्यों को रमाते हुए राक्षसों का दमन करते हुए आनन्द पाते हुए दुष्टों को मारते हुए सज्जनों को सुखी करते हुए तथा जनता की प्रियता को उत्पन्न करते हुए आजाद श्रीचन्द्रशेखर बहुत शोभायमान होते रहे ।

न कदापि सरोषमुखं सुहृदो ददृश्विधुशेखरमाप्तशमम् ।

गुणगौरवभासितविश्वनभा विरराज रचाजितरात्रिपतिः ॥६५॥

शिवा-अन्वयः—सुहृदः आप्त शमम् विधुशेखरम् कदापि सदोष-मुखम् न ददृशः गुणगौरवभासितविश्वनभाः रचा जितरात्रिपतिः विरराज ।

भावार्थ—शमशील श्री चन्द्रशेखर को उनके मित्रों ने कभी ऋद्ध-मुख नहीं देखा, वे तो अपने गुणों की गौरव से विश्वरूप आकाश को प्रकाशित करके अपनी कान्ति से चन्द्रमा को भी जीतकर सुशोभित हो रहे थे ।

अथेकदा स्वीयगृहं दिवृक्षः सख्या समेतः स सदाशिवेन ।

जगाम गूढो रिपुभिर्दुरापो जिज्ञासमानः कुशलञ्च पित्रोः ॥६६॥

शिवा-अन्वयः—अथ एकदा स्वीयगृहम् दिवृक्षुः च पित्रोः कुशलम् जिज्ञासमानः गूढः रिपुभिः दुरापः सः सदाशिवेन सख्या समेतः जगाम ।

भावार्थ—तत्पञ्चात् एकदार अपनी जन्मभूमि को देखने की इच्छा से और अपने माता पिता का कुशल समाचार जानने के लिये शत्रुओं द्वारा दुर्धर्ष श्री चन्द्रशेखर सदाशिव नामक मित्र के साथ छिपे रूप में अपने घर गये ।

भविष्यविद् भंगुरदेह एषः परार्थमित्येव विभाव्य चित्ते ।

ग्रहीतुकामश्चरमामनुजां स्वां मातरं राम इव प्रतस्थे ॥६७॥

शिवा-अन्वयः—भविष्यवित् (चन्द्रशेखरः) एषः देहः परार्थम् इति एवं चित्ते विभाव्य चरमाम् अनुजाम् ग्रहीतुकामः राम इव स्वाम् मातरम् प्रतस्थे ।

भावार्थ—भविष्यवेत्ता श्री चन्द्रशेखर ने यह विचार किया कि यह क्षणभंगुर गरीर परोपकार के लिये ही है । अतः जिस प्रकार वन गमन के समय भगवान श्रीराम मां कीसत्या के यहाँ विदा लेने पद्धारे थे उसी प्रकार जीवन की अन्तिम लीला का आदेश लेने के लिये आजाद जी अपनी मां के दर्शन करने के लिये पद्धारे ।

अनेकशो मित्रगणेन पृष्ठो नाच्छण यद् भेदभिया मनस्वी ।

प्रेमातिरेकेण तदेववृत्तं सदाशिवं गदगदमन्वयेचत् ॥६८॥

शिवा-अन्वयः—अनेकशः मित्रगणेन पृष्ठः मनस्वी भेदभिया यत् न आचाट प्रेमातिरेकेण तद् वृत्तम् सदाशिवम् गदगदम् अन्वयोचत् ।

भावार्थः—अनेक बार मित्र गणों से पूछे जाने पर भी मनस्वी श्री चन्द्रशेखर ने भेद के भय से जो बात कभी नहीं कही । इस समय प्रेम के अतिरेक के कारण उसी (जन्म के) इतिहास को गद-गद स्वर में सदाशिव से कहने लगे ।

पश्यांग चैतद् भवतं पुराणं पाणं मदीयो पितरौ च यस्मिन् ।

प्रीत्यंव मां पालयतः स्म यत्नेस्तद् दीर्घकालेन मयाद्य दृष्टम् ॥६९॥

शिवा-अन्वयः—अज्ञ में तत् पुराणम् पाणम् भवतम् पश्य यरिमन् मदीयो पितरौ प्रीत्या मां यस्तेः पालयतः स्म तत् दीर्घकालेन अलग गगा दृष्टम् ।

भावार्थ—हे मित्र ! मेरा वह पुराना आस फूल का बना बर देखो जिसमें मेरे भाता पिता ने अनेक धन्वों से प्रेषपूर्वक मेरा लालन पालन किया वह आज बहुत समय के पश्चात् भी बैठता ।

अभी च मे प्रामनिवासिलोकाः प्रशिक्षितो ये बंहुशः सखेऽहम् ।

इमे च बालास्तरदो लतारच यत्सन्निधी मोदमहं लभे स्म ॥१००॥

शिवा-अन्वयः—सखे ! अभी च मे प्रामनिवासिनः लोकाः ये अहम् बंहुशः प्रशिक्षितः इमे बालाः तरवः च दग्धाः लताः यन् सन्निधी अहम् मोदं लभे स्म ।

भावार्थ—हे मित्र ! ये हैं मेरे गांव के दो लोग जिन्होंने मुझे बहुत पढ़ाया लिखाया । ये हैं बालक वृक्ष और लताएँ जिनके समीप मुझे बहुत आनन्द मिलता था ।

स्वर्यं नैव सुखं तथामतभवं वारांगनाच्याहृतम् ।

धत्ते चेतसि तोषणं नहि तथा वच्चापवर्यं सुखम् ।

सत्यं सत्यमहं वदामि तनुते चित्ते मुदं याद्योम् ।

मातुमातृभूवः सुखं सुकृतिनां कोडे मुहुः क्रोडताम् ॥१०१॥

शिवा-अन्वयः—वारांगनाच्याहृतम् अमृतभवं स्वर्यं सुखं चेतरि तथा नैव तोषणं धत्ते, यज्ञ अपवर्यं सुखं तथा नहि । अहं सत्यं वदामि, सत्यं वदामि मातुः मातृभूवः कोडे क्रीडताम् सुकृतिनां सुखं चित्ते याद्यों मुदं तनुते ।

भावार्थः—मित्र ! मैं सत्य कह रहा हूँ, सत्य कह रहा हूँ कि मां मातृभूमि की गोद में खेलते हुए बड़भागियों के चित्त में जो सुख एवं आनन्द का अनुभव करता है वस्तुतः उस प्रकार का सुख न ही अमृत-मय होता है और न ही वारांगनाएँ दे सकती हैं । न ही वह (सुख) स्वर्ग में सम्भव है थोर न ही मोक्ष में ।

टिप्पणी—इसीलिए भगवान् श्रीराम ने जहा—जननी जन्मभूमियच स्वर्गादिपि गरीयसी ।

तीलोत्पलशयामसदेहकान्तिः क्लान्तिं हरन्ती प्रसर्वं महिम्ना ।

सुरेन्द्रवन्द्या नितरामनिन्द्या, जयस्यसौ भारतभूमिरीद्या ॥१०२॥

शिवा-अन्वयः—नीलोत्पलशयामसदेहकान्तिः महिम्ना प्रसर्वं क्लान्तिं हरन्ती सुरेन्द्रवन्द्या नितराम् अनिन्द्या असौ ईद्या भारतभूमि जयति ।

भावार्थ—मीले कमल के शमान शामल शरीर की आओ से युक्त तथा अपनी महिमा से (दर्शकों की) धक्कान मिटाती हुई इन्द्र के लिए भी बन्दनीय, सर्वथा निन्दारहित, स्तुति के योग्य इस भारतभूमि की जय हो ।

हिमाद्रिविव्याचलमूल्यश्लेषः संशोभमाना कृतवेदगाना ।

तसद् विमाना धृतभूरिमाना धर्म दधाना जयतामहोवम् ॥१०३॥

शिवा-अन्वयः—हिमाद्रिविव्याचलमूल्यश्लेषः संशोभमाना कृत-वेदगाना लसद्विमाना धृतभूरिमःना धर्मं दधाना इयं मही जयतात् ।

भावार्थः—हिमाचल और विव्याचल प्रमुख पर्वतों से सुशोभित वैदिक मान से युक्त, अनेक विमानों से अलङ्कृत अत्यधिक मान एवं धर्म को धारण करती हुई इस भारतभूमि की जय हो ।

वस्यां प्रभाभासुरमूरुरेत्त्रा त्राह्यीं विभां संकलयाम्बभूवः ।

देशस्य रेजुश्चरितार्थयन्तः सुपादनं भारतनामधेयम् ॥१०४॥

शिवा-अन्वयः—एश्यां प्रभाभासुरमूरुरेत्त्रा त्राह्यीं विभां संकलयाम्बभूवः देशस्य सुपादनं भारतनामधेयं चरितार्थयन्तः रेजः ।

भावार्थः—जिस भारतभूमि में आध्यात्मिक प्रभा से चमकृत बाह्यों ने वहां सम्बन्धी आभा को सङ्कुलित किया था एवं देश के परम पादन भारत नाम को चरितार्थ करके शुशोभित हुए थे ।

कोडे यदीये किल रामकृष्णौ,

संकीर्णमानो यथतुः प्रमोदम् ।

ता विश्वविव्यापितदिव्यकीर्तिः,

स्वमातृभूमिं प्रणतोऽस्मि मूर्धना ॥१०५॥

शिवा-अन्वयः—यदीये कोडे रामकृष्णौ संकीर्णमानो यथतुः तां विश्वविव्यापितदिव्यकीर्तिं स्वमातृभूमिं (अहं) मूर्धना प्रणतः अस्मि ।

भावार्थः—जिसकी गोद में खेलते हुए श्रीराम और वीकृष्ण ने आनन्द प्राप्त किया जसी विश्व प्रसिद्ध कीर्तिवानों अपनी मातृभूमि को मैं सिर से प्रणत हूँ ।

हर्षं विधात्रा न विभृति सम्यं जगत्सम्यं किल भारतस्य ।

तद् भारतस्यूनमनेन नाम मेभाक्षरेणास्य जगद् व्यधायि ॥१०६॥

शिवा-अन्वयः—विधात्रा हर्षं यत् सम्यं जगत् भारतस्य साम्यं न

विभाति किल । तत् अनेन भारतात् नेमाक्षरेण न्यूनं अस्य नामं जगद् व्यधायि ।

भावार्थ—ब्रह्माजी ने देखा कि समूर्धं जगत् भारत की तुलना में नहीं आता इसलिए इन ब्रह्माजी ने भारत से आधा अक्षर कम करके इसका नाम जगत् रख दिया ।

इत्थं सखायं प्रति मातृभूमे महात्म्यमीड्यं निगदन्महात्मा ।

ददर्श तुल्यव्यसनां सहैव सौरीं प्रभां स्वां जननौं जरात्मि ॥१०७॥

शिवा-अन्वयः—इत्थं महात्मा सखायं प्रति मातृभूमे: ईड्यं माहात्म्यं निगदन् सहैव तुल्यव्यसनां सौरीं प्रभां च जरात्मि त्वां जननौं ददर्श ।

भावार्थ—इस प्रकार मित्र के प्रति अपनी मातृभूमि का पवित्र माहात्म्य वर्णन करते हुए महात्मा चन्द्रशेखर ने समान विपन्नि वाली सूर्य की कान्ति एवं वृद्धावस्था के कारण आते अपनी माँ, इन दोनों को एक साथ देखा ।

सुदुर्बलां श्वेतकचां स्वसूनो दीनां वियोगेन सुजीणवस्त्राम् ।

हिमाद्रितां हेमलतामिवार्या तपोमयीं सान्ध्यसरोजवक्त्राम् ॥१०८॥

शिवा-अन्वयः—सुदुर्बलां श्वेतकचां स्वसूनोः वियोगेन दीनां सुजीणं वस्त्रां हिमाद्रितां हेमलताम् इव आर्या तपोमयीं सान्ध्यसरोजवक्त्रां ददर्श ।

भावार्थ—दुर्बल शरीर एवं श्वेतकेशोवाली, अपने पुत्र के वियोग से अत्यन्त दीन फटे पुराने वस्त्र धारण की हुई बर्फ से ढकी हुई स्वर्णलता की भाँति, श्रेष्ठ, तपोनिष्ठ सन्ध्याकाल के कमल के समान मुख वाली (अपनी माताश्री को) देखा ।

तां दण्डवत् स जननौं प्रणनाम वीर,

अम्बाम्ब चेति निगदन्विद्युवत् सवाप्यः ।

तं प्रेत्य लब्धमिव सापि सुतं यथा,

गौराश्लिष्य चन्द्रवदनं मुहुराचुचूम्ब ॥१०९॥

शिवा-अन्वयः—वीरः अम्ब अम्ब इति निगदन् सवाप्यः शिशुवत् स्वजननौं दण्डवत् प्रणनाम । सापि प्रेत्य लब्धमिव सुतं गौः यथा आश्लिष्य चन्द्रवदनं मुहुः आचुचूम्ब ।

भावार्थ—वीर चन्द्रशेखर ने आँखों में आँगू भरकर वालक वी

भाँति माँ माँ कहते हुए माताश्री के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया । माँ मानो भर कर प्राप्त हुए अपने पुत्र की गौँ की भाँति वात्सल्यपूर्वक हृदय से लगाकर उनके मुख्यन्द्र को बार बार चूमने लगी ।

श्रुत्वा तयोर्विलपनं मुनिधैर्यहारि,
अम्बेति पुत्रइति तत्र गतो द्विजेन्द्रः ।

हृष्ट्वा सुतं चरणयोः पतितं,

भुजाभ्यामुत्थाप्य साथूनयनो द्वमालिलिङ्ग ॥११०॥

शिवा-अन्वयः—मुनिधैर्यहारि अम्ब इति पुत्र इति च तयोः विलपनं श्रुत्वा तत्र गतः द्विजेन्द्रः चरणयोः पतितं सुतं हृष्ट्वा भुजाभ्याम् उत्थाप्य साथूनयनः इदं आलिलिङ्ग ।

भावार्थ—माँ माँ ! बेटा बेटा ! इस प्रकार मुनियों के धैर्य को भी हरने वाला माँ और बेटे का करुणकर्त्तव्य सुनकर ब्राह्मणश्रेष्ठ श्री सीताराम त्रिपाठी भी वहाँ आ गये । अपने चरणों में पड़े हुए पुत्र की निहारकर अश्रुपूर्णनयनों से पिताने भुजाओं से उठाकर हृता से हृदय से लगा लिया ।

आश्वासयत् स पितरौ करुणं रुदन्ती,

प्रावेदयन् निजकथामरिभिः सुगोप्याम् ।

स्मृत्वा च पूर्वचरितं करुणापगायां,

सम्मग्नधैर्यविटपा रुदुः स्फुटन्ते ॥१११॥

शिवा-अन्वयः—सः पितरौ करुणं रुदन्ती आश्वासयन् अरिभिः सुगोप्यां निजकथां प्रावेदयत् च पूर्वचरितं स्मृत्वा करुणायगायां सम्मग्नधैर्य विटपाः ते स्फुटं रुदुः ।

भावार्थ—करुणापूर्वक रोते हुए अपने माता पिता को श्री चन्द्रशेखर ने आश्वस्त किया । शत्रुओं से अपने आने के वृत्त को अत्यन्त गुप्त रखने के लिये कहा पूर्व चरित्र का स्मरण करके करुणा की नदी में माता पिता एवं पुत्र तीनों का धैर्यरूप वृक्ष बह गया और वे फूट फूट कर रोने लगे ।

सा चन्द्रशेखरमथाभंकवत्सलत्वान्-
माताशयन्मध्यरभोजनमातमहस्तात् ।

आचामयत्सुप्यसा परमप्रसन्ना,

नेत्रातिथी इव सुती बहु मन्यमाना ॥११२॥

शिवा-अन्वयः—अथ सा माता अभेक्तसलत्वात् आत्महस्तात् चन्द्रशेखरं मधुरं भोजनं आशयत् । परमप्रसन्ना नेत्रातिथी इव सुती वहु-मन्यमाना मुख्यता आचामयत् ।

भावार्थ—इसके पश्चात् पुत्रवत्सला माँ में अपने हाथ से चन्द्रशेखर को मधुर भोजन खिलाया । (इन) दोनों पुत्रों को नेत्रों का अतिथि मानती हुईं परम प्रसन्न माँ ने शुद्ध जल से आचमन कराया ।

तत्प्रीतिबद्धहृदयावनुवासरञ्च आनन्द-
सारसरसीं सततं विगाढौ ।
मात्रानुरागविवशावबुभुक्षिताव-
प्याकण्ठभोजनभूजी स्म सुखं शयाते ॥११३॥

शिवा-अन्वयः—तत्प्रीतिबद्धहृदयो अनुवासरं आनन्दसारसरसीं सततं विगाढौ च मात्रानुरागविवशो अबुभुक्षिती अपि आकण्ठभोजनभूजी सुखं शयाते स्म ।

भावार्थ—माता पिता के प्रेम में आबद्ध हृदयवाले वे दोनों निरन्तर आनन्द के सरोवर डूबे रहते थे और भूखे न होने पर भी माता के प्रेम के द्वारा में होकर प्रतिदिन आकण्ठ भोजन करके सुखपूर्वक सोते थे ।

एवं विनोदशयनभ्रमणाशनार्थः,
पित्रोर्गृहे निवसतोः कर्तिचिद्विनानि ।
यातानि राजपुरुषागमशङ्कुया तौ,
चिन्तां गतौ सुखमहो न हि दीर्घकालम् ॥११४॥

शिवा-अन्वयः—एवं विनोदशयनभ्रमणाशनार्थः पित्रोः गृहे निवसतो कर्तिचित् दिनानि यातानि । राजपुरुषागमशङ्कुया तौ चिन्तां गतौ । अहो सुखं दीर्घकालं न हि ।

भावार्थ—इस प्रकार विनोद शयन भ्रमण भोजन आदि विनोद करते हुए माता पिता के घर रहते हुए (श्री चन्द्रशेखर आजाद के) कुछ दिन बीत गये । फिर पुलिस के आने की आशङ्का से दोनों भित्र चिन्तित हो गये । अहो ! सुख बहुत दिन तक नहीं रहता ।

तौ मातरं च पितरं मनसा प्रणम्य,
गृहं गतौ स्वभवनान्न निवेश ताम्याम् ।

तावप्यलब्धतनयो ग्रजतः स्म खेदं,
शोकावहो हि कृतिना प्रियविप्रयोगः ॥११५॥

शिवा-अन्वयः—तौ मातरं पितरं च मनसा प्रणम्य ताम्यां न निवेश स्वभवनात् गृहं गतौ । तौ अपि अलब्धतनयो खेदं ग्रजतः स्म हि प्रियविप्रयोगः कृतिनाम् अपि शोकावहः ।

भावार्थ—(इसके पश्चात्) वे दोनों (सदाशिव और चन्द्रशेखर) माता पिता को मन से प्रणाम करके उनसे निवेशन किये विना ही अपने भवन से चुपचाप चले गये । ब्राह्मण दम्पति पुत्रों को न पाकर दुःखी हुए । व्याख्योंकि प्रियजनों का वियोग महापुरुषों के लिए भी शोकप्रद होता है ।

अथात्मबन्धून् स समुद्दिधीर्षुः स्वतन्त्रताजहनुसुतागमेन ।

समानधर्मा सगरान्वयानां सुदुश्चरं क्रान्तिपश्चचार ॥११६॥

शिवा-अन्वयः—अथ जहनुसुतागमेन आत्मबन्धून् समुद्दिधीर्षुः सगरान्वयानां समानधर्मा सः सुदुश्चरं क्रान्ति तपः चचार ।

भावार्थ—इसके अनन्तर स्वतन्त्रतारूप गंगाजी के आगमन से अपने मृतवन्धुओं का उद्धार करने के लिए इच्छुक सगरवंश के राजाओं के समान धर्म वाले उन चन्द्रशेखर आजाद ने अत्यन्त कठोर क्रान्तिरूप तप किया ।

उत्साहा वीरो विपुलाश्च नारीविधाय संग्रामचणारिपुणीः ।

निसर्गसिद्धामवलाभियुक्ति स स्त्रीजनानां विफलीचकार ॥११७॥

शिवा-अन्वयः—वीरः विपुला नारीः उत्साह्य ताश्च संग्रामचणारिपुणीः विधाय सः स्त्रीजनानां निसर्गसिद्धां अवलाभियुक्ति विफलीचकार ।

भावार्थ—वीर चन्द्रशेखर ने अनेकानेक नारियों को उत्साहित करके उन्हें शत्रुओं के विनाश में समर्थ तथा संग्राम में कुशल बनकर स्त्रीजनों की 'स्वाभाविक अवला' इस प्राचीन उक्ति को विफल कर दिया ।

पाद टिप्पणी—नास्ति वलं यासां ताः अवला । आशय यह है कि अभी तक नारी को अवला अर्थात् बलहीन कहा जाता था किन्तु अब युद्ध में कुशल होने से यह उक्ति व्यर्थ सी हो गई ।

कदापि दर्पादिमनोविकारा न स्पृष्टवन्तः सुमनस्तदीयम् ।

कञ्चिद्वृतीयं प्रसमीक्ष्य रुद्धं न नर्मरम्यैः कुरुते स्म तुष्टम् ॥११८॥

शिवा-अन्वयः—दर्पादिभनोविकाराः तदीयं सुमनः कदापि न स्पृष्ट-
वन्तः । कञ्चिद् दलीयं रुष्टं प्रसमीक्ष्य सः नर्मरम्यं तुष्टं कुरुते स्म ।

भावार्थ—दर्प आदि भनोविकार श्री चन्द्रशेखर आजाद के सुन्दर
मन को कभी भी स्पृशं न कर सके । अपने दल के किसी भी व्यक्ति को
असन्तुष्ट देखकर वे विनोदभरे बाक्यों से सन्तुष्ट कर देते थे ।

ऋजुस्वभावो भयवर्जितात्मा सुदृशंनो नीतिविशारदश्च ।

आजीवनं मारुतिष्वद् दधार स ब्रह्मचर्यवत्तमात्मनिष्ठः ॥११६॥

शिवा-अन्वयः—ऋजुस्वभावः, भयवर्जितात्मा, सुदृशंनः, नीति-
विशारदः आत्मनिष्ठः च सः मारुतिष्वद् आजीवनम् ब्रह्मचर्यवत्तम् दधार ।

भावार्थ—सरल स्वभाव, निर्भीक, दर्शनीय एवं नीतिकुशल
श्री चन्द्रशेखर ने हनुमान जी की भाँति परमात्मा में निर्णय रखकर
आजीवन ब्रह्मचर्यवत्त धारण किया ।

वने रणे भीषणसङ्कुटे च त्यक्ता धृतिर्नो शशिशेखरेण ।

मन्ये प्रवीरस्य दुरन्तदैर्यसिन्धी निमज्जन्ति समे स्म विद्वाः ॥१२०॥

शिवा-अन्वयः—शशिशेखरेण वने रणे भीषणसङ्कुटे च धृतिः न
त्यक्ता । मन्ये प्रवीरस्य दुरन्तदैर्यसिन्धी समे विद्वाः निमज्जन्ति स्म ।

भावार्थः—वन में, युद्ध में या भीषण सङ्कुट में भी श्री चन्द्रशेखर
धर्यं नहीं छोड़ा । (ऐसा लगता है) मानो यीर चन्द्रशेखर के अपार धर्यं के
के सागर में सभी विघ्न ढूँ जाते थे ।

यदा यदा दानववृत्तिगीरा: प्रह्लादकल्पान् किल भारतीयान् ।

प्राधर्यं यस्तेन तदा तदेव नृसिंहतुल्येन विमदितास्ते ॥१२१॥

शिवा-अन्वयः—दानववृत्तिगीरा: प्रह्लाद कल्पान् भारतीयान् यदा
यदा प्राधर्यं यस्तेन तदा तदा नृसिंहतुल्येन तेन ते विमदिताः किल ।

भावार्थ—जब जब दानववृत्तिवाले अंग्रेजों ने प्रह्लाद के समान
(स्वधर्मनिष्ठ) भारतीयों का धर्षण किया तब तब नृसिंह के समान श्री
चन्द्रशेखर द्वारा वे कुचल दिये गये ।

स प्राणदण्डादिमहाभियोगेरनेकदा संक्रमितोऽपि वीरः ।

अज्ञातवासा इव पाण्डुपुत्रा नायाद् वशं गुप्तसप्तनदूतः ॥१२२॥

शिवा-अन्वयः—सः वीरः प्राणदण्डादिमहाभियोगः गुप्तसप्तनदूतः
अनेकदा संक्रमितः अग्नि अज्ञातवासा: पाण्डुपुत्रा: इव वशं न आयात् ।

भावार्थ—हैं वीर अत्यधीश्वर प्राणदण्ड आग्नि महाभियोगों के कारण
खुफिया पुलिस द्वारा अनेकवार थे रे जाने पर भी अज्ञातवास करते हुए
पाण्डुपुत्रों की भाँति (अंग्रेजों के) वश में नहीं आये ।

जिवृक्षवस्तं निजवंशकालं व्यालञ्च दुःशासन दर्दुरस्य ।

तच्चित्र सचित्रित गेहभित्ति देशं समस्तं रिपवोऽन्वतिष्ठन् ॥१२३॥

शिवा-अन्वयः—रिपवः निजवंशकालं च दुःशासन दर्दुरस्य व्यालं
तं जिवृक्षवः समस्तं देशं तत् चित्रसचित्रितगेहभित्ति अन्वतिष्ठन् ।

भावार्थ—अंग्रेज शत्रुओं ने अपने वंश के लिए काल तथा त्रिटिश
शासन रूप में डंक के लिए सर्प के समान उन चन्द्रशेखर आजाद को पकड़ने
के लिए समस्त देश के प्रत्येक घर की दीवार पर श्री चन्द्रशेखर के चित्र
लगा दिये ।

पुरस्किया पञ्चसहस्रमुद्राः प्राधोपि तन्त्रियहकारिणे वै ।

तं मार्गमाणाः पुरुषाः सशस्त्राः देशं व्यचिन्वन् सकलं यथान्धाः ॥१२४॥

शिवा-अन्वयः—तन्त्रियहकारिणे पञ्चसहस्रमुद्राः पुरस्किया वै
प्राधोपि । तं मार्गमाणाः सशस्त्राः पुरुषाः सकलदेवं अन्धा यथा व्यचिन्वन् ।

भावार्थः—श्री चन्द्रशेखर को पकड़ने वाले के लिए अंग्रेजों के
पांच हजार मुद्रा का पुरेस्कार धोषित किया । उनको खोजते हुए सशस्त्र
पुलिस ने अन्धों की भाँति सम्पूर्ण देश को छान लिया ।

एवं गताश्चाष्टसमाः सुखेन क्रान्तौ रतस्यास्य महावतस्य ।

सुगुप्तवेशस्य सपत्नवृन्दैः सुदुर्यहस्योदृपशेखरस्य ॥१२५॥

शिवा-अन्वयः—एवं सुगुप्तवेशस्य सपत्नवृन्दैः च सुदुर्यहस्य क्रान्तौ
रतस्य महावतस्य अस्य उडुपशेखरस्य सुखेन अष्ट समाः जाताः ।

भावार्थ—इस प्रकार गुप्तवेश में रहते हुए और शत्रुसमूह द्वारा
जिनको पकड़ना कठिन था ऐसे क्रान्ति में तत्पर, महावती श्री चन्द्रशेखर
आजाद के आठ वर्ष सुखपूर्वक वीत गये ।

हिताद्वै चन्द्ररामगृहमधुमथे सप्तविशे दिनाङ्के,

कालः प्रायात् करालः सकलविकलनः फरवरी मासि गन्तुम् ।

स्वीयक्रान्त्याद्यजञ्जोच्चलितरिपुत्रो विश्वसंगीतकीर्ते,

राजादस्यापि हा ! हा ! द्रुहिण विधिवशात् तीर्थराजस्थितस्य ॥१२६॥

शिवा-अन्वयः—हा, हा चन्द्ररामग्रहमध्यमथने छिण्टाल्दे फरवरी मासि सप्तविंशे दिनाङ्के स्वीयक्रान्त्यारुपज्ञज्ञोच्चलितरिपुत्रोः विश्वसंगीतकीर्तेः तीर्थराजस्थितस्य आजादस्य अपि द्रुहिणि विधिवशात् गन्तुम् सकलविकलनः करालकालः प्रायात् ।

भावार्थः—हा ! हा ! २७ करवरी १६३१ के दुर्दिन में अपनी आन्तिरूप ज्ञज्ञा से गत्रुरूप वृक्षों को हिला देने वाले, विश्वविरुद्धात् कीर्ति वाले, तीर्थराज प्रयाग में स्थित श्री चन्द्रशेखर आजाद के महाप्रयाण का सबको विकल करने वाला करालकाल आ ही गया ।

स तत्प्रभाते विभया विभाते सप्ताश्ववाते: शुचि वाते वाते ।

श्रीविष्णुराते कृतपापधाते याति सम गङ्गाकलतोय पाते ॥१२७॥

शिवा-अन्वयः—सः विभया विभाते सप्ताश्ववाते शुचि वाते वाति श्रीविष्णुराते कृतपापधाते गङ्गाकलतोयपाते तत् प्रभाते याति सम ।

भावार्थः—वे श्री चन्द्रशेखर सूर्यनारायण की प्रभासे मुशोभित सूर्यनारायण के उदय से पवित्र मन्द-मन्द वायु के सकोरों से युक्त उस प्रातः काल में भगवान् के द्वारा प्रेरित, समस्त पापों को नष्ट करने वाले श्री गंगा जी के पावन प्रवाह में स्नान करने गये ।

विगाह्य वीरः सरितं सुराणामुपास्य सन्ध्या सलिलं निपीय ।

आगच्छदारामभसौ सखिभ्यां यथा प्रभासे नरवेशकृष्णः ॥१२८॥

शिवा-अन्वयः—वीरः सुराणां सरितं विगाह्य संध्याम् उपास्य सलिलं निपीय असौ सखिभ्यां (सह) आरामं आगच्छत् यथा नरवेशकृष्णः प्रभासे (आजगाम) ।

भावार्थः—जिस प्रकार नरवेशधारी भगवान् श्रीकृष्ण गोलोक यात्रा के लिए समुद्र में स्नान करके प्रभास क्षेत्र में पधारे थे उसी प्रकार श्री चन्द्रशेखर आजाद गंगा जी में स्नान कर सन्धोपासन करके, गंगाजल पीकर अपने दो मित्रों सहित एल्फेड पार्क में आये ।

तद्वीक्ष्य वक्ष्यनिविडं नितान्तं शान्तं च कान्तं खगकूजितेन ।

उपाविशचिन्तनतत्परात्मा मरनः समाधाविव नीलकण्ठः ॥१२९॥

शिवा-अन्वयः—वृक्षः निविडम् नितान्तम् शान्तम् खगकूजितेन कान्तं तद्वीक्ष्य समाधी मरनः नीलकण्ठः इव चिन्तनतत्परात्मा उपाविशत् ।

भावार्थः—वृक्षों से घिरे हुए अत्यन्त शान्त तथा पक्षियों के कलरव

से राणीग जल वर्षीने को वैष्णव गमांध में लील नीलकण्ठ शिव भी भाँति छिन्नत मै तथा भाजाव भी अग्रवाल वर्षी भाँति भैरव भैरव गये ।

ततोऽभ्यपश्यन् निजपूर्वमित्रं पापात्मकं चद्रगणाभिधानम् ।

मन्ये तमाकारयितुं शिवेन प्रस्थापितोऽभ्यूभूषि वीरभद्रः ॥१३०॥

शिवा-अन्वयः—ततः निजपूर्वमित्रम् पापात्मकम् चद्रगणाभिधानम् अभ्यपश्यन् मन्ये शिवेन तम् आकारयितुम् वीरभद्रः भूषि प्रस्थापित अभूत् ।

भावार्थः—इसके बाद श्रीचन्द्रशेखर जी ने अपने पूर्वमित्र अत्यन्त पापी हद्रगण अर्थात् वीरभद्र के ही नाम वाले एक युवक को देखा मानो श्री चन्द्रशेखर को शिवलोक बुलाने के लिये भगवान् शंकर ने ही पृथ्वी पर वास्तविक वीरभद्र को ही भेज दिया था ।

अनिष्टशंकाकुलचित्तवृत्तिमुहूर्तमासीद् विमनामहात्मा ।

विहाय चिन्ताऽच्च मृगेन्द्रसत्वस्तद्वाटिकाचंकमणं व्यधत्त ॥१३१॥

शिवा-अन्वयः—अनिष्टशंकाकुलचित्तवृत्तिः महात्मा मुहूर्तम् विमना आसीत् च मृगेन्द्रसत्वः चिन्ताम् विहाय तद वाटिकाचंकमणम् व्यधत्त ।

भावार्थः—अनिष्ट की आशंका से व्याकुल चित्तवृत्ति वाले महात्मा श्रीचन्द्रशेखर कुछ देर तक अन्वमनस्क रहे, फिर मरण की चिन्ता छोड़कर सिंह के समान पराकर्मी आज भी उसी वाटिका में घूमने लगे ।

सुवर्णसूत्रोपमयज्ञसूत्रसनाथितांसो दद्वाहुदण्डः ।

रक्ततारविन्दोपमनेत्रकान्तिः प्रफुल्लपद्ममुखो मनोऽः ॥१३२॥

शिवा-अन्वयः—अन्वयः सुगमः ।

भावार्थः—सुवर्ण के सूत्र के समान यज्ञोपवीत से उनका स्कन्ध मुशोभित हो रहा था, उनके भुजदण्ड सुहड़ थे उनके नेत्र लाल कमल की भाँति कान्तिमान थे । उनसे मुख पर विकसित कमल की आभा धिरक रही थी जो बहुत सुन्दर लगरही थी ।

प्रसाधयन् इमशुनिजांगुलीभीरुदीपयन् वीररसं प्रसुप्तम् ।

प्रतीक्षमाणो द्विरदान् प्रमत्तान् सज्जो युवा भीषणकेसरीव ॥१३३॥

शिवा-अन्वयः—निजांगुलीभिः इमशु प्रसाधयन् प्रसुप्तम् वीररसम् उदीपयन् प्रमत्तान् द्विरदान् प्रतीक्षमाणः सज्जः युवा भीषणकेसरीव आसीत् ।

भावार्थ—अपनी अंगुलियों से सूँच खड़ी करते हुए सोये हुए वीर-रस को उद्दीपन करते हुए श्री चन्द्रशेखर मत्त गजेन्द्रों की प्रतीक्षा में तत्पर युद्ध के लिये उत्सुक युवक अत्यन्त भयंकर सिंह की भाँति जान पढ़ते थे ।

केनापि नीचेन विगहितेन राष्ट्रद्वृहा धर्मद्वृहा खलेन ।

संसूचिता शासकसंनिकेभ्यस्तस्यस्थितिश्चालके डपाकंमध्ये ॥१३४॥

शिवा-अन्वय—केनापि नीचेन विगहितेन राष्ट्रद्वृहा धर्मद्वृहा खलेन आलके डपाकंमध्ये तस्य स्थितिः शासकसंनिकेभ्यः संसूचिता ।

भावार्थ—किसी नीच धृणित राष्ट्रद्वृही, धर्म से द्वोह करने वाले दुष्ट ने अंग्रेज सैनिकों को श्री चन्द्रशेखर के आल्फेड पार्क में होने की सूचना दी ।

अथापतद्गौरविज्ञालसेना सशस्त्रविश्वेश्वरसिंह मुह्या ।

अनेकयानेन्द्र पदातिवीरराराममेतत् परितः परीतम् ॥१३५॥

शिवा-अन्वय—अथ सशस्त्रविश्वेश्वरसिंहमुह्या गौरविज्ञाल-सेना आपतत् च अनेकयानैः पदातिवीरैः एतत् आरामम् परितः परीतम् ।

भावार्थ—इसके अनन्तर अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जीत विश्वेश्वरसिंह थानाध्यक्ष के साथ अंग्रेजों की विज्ञाल सेना आटूट पड़ी अनेक सवारों और पैदल वीरों से यह आलके ड पार्क चारों ओर से घेर लिया गया ।

दृष्ट्वा गजान् व्याघ्र इव प्रहृष्ट आजाद उत्तोल्य भुशुण्डिकां स्वाम् ।
व्यालीढ सम्ब्रोडितदेवराजो मुदा युयुत्सुस्तरसोद्यतोऽभूत् ॥१३६॥

शिवा-अन्वय—गजान् दृष्ट्वा व्याघ्रः इव प्रहृष्टः आजादः स्वाम् भुशुण्डिकाम् उत्तोल्य व्यालीढसम्ब्रोडितदेवराजः तरसा युयुत्सुः मुदा उद्यतः अभूत् ।

भावार्थ—हाथियों को देखकर सिंह की भाँति पुलकित आजाद श्री चन्द्रशेखर अपनी बन्दूक तानकर युद्ध के पैतरों से देवराज को भी चकित करते हुए ज़त्रुओं के साथ युद्ध करने के लिये प्रसन्नतापूर्वक उद्यत हो गये ।

अहो अनेके रिपवः सशस्त्रा द्विष्टविनाशाय कृतप्रयत्नाः ।

एकोऽपि सौभद्रसमप्रतापो जही न धैर्यं रणकर्कशोऽयम् ॥१३७॥

शिवा-अन्वय—अहो द्विष्टविनाशाय कृतप्रयत्नाः रिपवः अनेके अयम् रणकर्त्त्वं एकः अपि सौभद्रसमप्रतापः धैर्यम् न जही ।

भावार्थ—अहो ज़त्रु के विनाश के लिये प्रयत्नशील सशस्त्र अंग्रेज सैनिक अनेक थे, किन्तु एक होने पर भी युद्धकर्त्ता आजाद श्री चन्द्रशेखर ने अभिमन्यु के समान प्रतापपूज्ज्ञ के कारण अपना धैर्य नहीं छोड़ा ।

अथारभन्त तेन युद्धमुद्धतास्त्रशत्रवोऽ-
भिभन्यवोऽभिभन्युना यथा विरुद्धकौरवाः ।

तडत्तडत्तडत्तडत्तडित्प्रभोपमायुधं
स्फुरत्प्रभातिरोहितप्रचण्डचण्डदीधिति ॥१३८॥

शिवा-अन्वय—अथ अभिमन्यवः उद्धतास्त्रशत्रवः अभिमन्युना विरुद्धकौरवाः यथा तडत्तडत्तडत्तडित्प्रभोपमायुधस्फुरत्प्रभा तिरोहितप्रचण्डचण्डदीधिति युद्ध तेन आरभन्त ।

भावार्थ—अब त्रृष्ण उद्धित अस्त्रों वाले अंग्रेजों ने अभिमन्यु के साथ विरोधी कौरवों की भाँति तड़तड़ाते विजली जैसे शस्त्रों की चमकती कान्ति से सूर्य किरणों को भी छिपाने वाला धोर युद्ध आजाद श्री चन्द्रशेखर के साथ प्रारम्भ कर दिया ।

समुच्छलद्विविरुद्धयुद्धद्वित्तवृत्तिभि
विपक्षयीर्यवारिराशिमग्नधैर्यपादपैः ।
द्विष्ट् विनाशात्तर्सिभिर्महास्त्रशत्रविभि-
हैरि प्रगर्ज योद्धृभिविजृभते स्म तत्पृथलम् ॥१३९॥

शिवा-अन्वय—अन्वयः सुगमः ।

भावार्थ—उछलते हुए विरुद्ध श्री चन्द्रशेखर के युद्ध में अपने मन को रुद्ध किये हुए तथा आजाद के पराक्रम महासागर में धैर्य वृक्ष को ढ़बोये हुए ज़त्रु के विनाश में तत्पर अनेक अस्त्र-शस्त्रका वर्णण करते हुए सिंह के समान गजेंते हुए अंग्रेज योद्धाओं से वह आल्फेड पार्क व्याप्त हो गया ।

कवचिच्छृतद्विनिका वमन्ति कालकूट गोलिकाः,
कवचिद् भुशुण्डिका भवन्ति द्वहिनपूज्जवृज्जिकाः ॥
कवचित् प्रवीर गर्जनं कवचित् करालतज्जनम्,
कवचित् करोत्यटाट्यकां रणे प्रसन्नचण्डिका ॥१४०॥

शिवा-अन्वयः—अन्वयः सुगमः ।

भावार्थ—कहीं पर तोपें विष की गोलियाँ उगल रहीं हैं तो कहीं पर बन्दूकें अग्नि पुञ्ज की वर्षा कर रही हैं। कहीं पर बीरों का गर्जन है तो कहीं पर भयंकर तर्जन, कहीं पर युद्ध में प्रसन्न हुई चण्डिका भ्रमण कर रही है।

इति प्रवृद्धयेरिवंशजातवेदसा रुपा,
प्रबीरचन्द्रशेखरेण गोलिकाप्रवर्षणैः ।
रणाङ्गणे सहजशो निपातिता पलायिता,
निरस्तशस्त्रकाः समर्पितात्मकाश्च कोटिशः ॥१४१॥

शिवा-अन्वयः—अन्वयः सुगमः ।

भावार्थः—इस प्रकार शत्रुंश को जलाने के लिये बड़े हुए कोधाग्नि से युक्त श्रेष्ठ वीर श्री चन्द्रशेखर द्वारा गोलियों की बोछारों से युद्ध के अंगन में हजारों मारे गये वहुतेरे भागे और करोड़ों ने हथियार डालकर आत्मसमर्पण कर दिया।

अयुध्यताहृवे प्रमत्तगौरसंन्यरक्षिणा,
सनाटवार्द्धरेण चन्द्रशेखरो द्विष्टन्तपः ।
रणैकलव्यपाटवः प्रशस्तहस्तलाघव-
श्चकार रौद्रताण्डवं सपत्नसंजिहीवंया ॥१४२॥

शिवा-अन्वयः—आहृवे प्रमत्तगौरसंन्यरक्षिणा नाटवार्द्धरेण द्विष्टन्तपः चन्द्रशेखरः अयुध्यत् रणैकलव्यपाटवः हस्तलाघवः सपत्नसंजिहीवंया सः रौद्रताण्डवं चकार।

भावार्थः—अंग्रेजों के कर्नल नाटवार्द्धर के साथ शत्रुतापन श्रीचन्द्रशेखर युद्ध करने लगे युद्ध में एक मात्र कुशल तथा हस्तलाघव में प्रसिद्ध आजाद जी ने शत्रुओं की संहार की इच्छा से रौद्रताण्डव प्रारम्भ कर दिया।

क्षणैश्च वीरः कतिभिश्चदेव, जघान शत्रूस्तिमिरं यथाकः ।
संग्रामभूमौ शशिशेखरेण प्रवाहितो वीररसप्रवाहः ॥१४३॥

शिवा-अन्वयः—अकां यथा तिमिरम् वीरः कतिभिश्चत् क्षणः शत्रून् जघान, शशिशेखरेण संग्रामभूमौ वीररसप्रवाहः प्रवाहितः ।

भावार्थः—कुछ ही क्षणों में उस वीरपुञ्जव ने शत्रुओं को उसी

प्रकार गढ़ के द्विया जैसे शूनी बाधकार को भगान कर देते हैं। रणभूमि में श्रीचन्द्रशेखर ने वीर रथ का प्रवाह श्रावित कर दिया। महानदी शोणितवारिपूरा प्रवाहिताभूत समराङ्गणीरक्षम् ।

कवचित् कवन्धाः पतिताः कवचित् भग्नाक्षिपादोरकराः सपत्नाः ॥१४४॥

शिवा-अन्वय अस्मिन् समराङ्गणे शोणितवारिपूरा महानदी प्रवाहिताभूत् कवचित् कवन्धाः पतिता कवचित् भग्नाक्षिपादोरकराः सपत्नाः ।

भावार्थ—इस रणभूमि में रक्त की महानदी वह चली कहीं पर कवन्ध पड़े थे तो कहीं आंख, चरण, जड़धा हाथ से विहीन हजारों शत्रु (अंग्रेज) पड़े थे।

समे तमुद्दिश्य भटा: समन्तात् व्यवाकिरन् दारुणशस्त्रवर्णः ।
कपीशवत् शौर्यनिधिस्तथापि नाभूत् स लक्ष्यं द्विषदायुधानाम् ॥१४५॥

शिवा-अन्वयः—समे भटा: तम् उद्दिश्य दारुणशस्त्रवर्णः समन्तात् व्यवाकिरन् तथापि सः शौर्यनिधिः सः कपीशवत् द्विषदायुधानाम् स लक्ष्यं न अभूत् ।

भावार्थः—सभी अंग्रेज सैनिक श्री चन्द्रशेखर को ही लक्ष्य बनाकर भर्यकर शस्त्रों की बोछार से चारों ओर से घेर लिये। फिर भी पराक्रम-पुञ्ज श्री आजाद जी हनुमान जी के समान शत्रुओं के शस्त्रों के लक्ष्य नहीं बने।

स्वयं स वृक्षान्तरितः प्रबीरो गोलीः सरोषं प्रहरन्नमोद्धाः ।
किरीटिवत् कम्पितयुद्धयोधः क्रीडन् खगेन्द्रो भुजगेन्द्रिवास्त ॥१४६॥

शिवा-अन्वयः—वृक्षान्तरितः प्रबीरः सरोषम् स्वयम् अमोधः गोलीः प्रहरन् किरीटिवत् कम्पितयुद्धयोधः भुजगैः क्रीडन् खगेन्द्रः इव आस्त ।

भावार्थः—वीर चन्द्रशेखर वृक्ष की आड़ से क्रोध पूर्वक भर्यकर गोलियाँ चलाते हुए अर्जन की भाँति योद्धाओं को कम्पित करके सर्पों के साथ खेलते हुए गरुड़ जैसे लग रहे थे।

निरीक्ष्य चैतद् रणकोशलं वै वीर्यं तदीयं हृतवीरधैर्यम् ।
न्यस्तास्त्रशस्त्रं रिपुसंन्यमातं हा हेति शब्दं तुमुलं चकार ॥१४७॥

शिवा-अन्वयः—एतद् रणकोशलम् हृतवीरधैर्यम् तदीयम् वीर्यम्

४ निरीक्षण व्यापारात्मकान् आगम् रिपुसंघम् हा-हा इति तुमुलम्
चकार ।

भावार्थः—श्री चन्द्रशेखर के युद्ध कौशल और जातुधैर्यहारी पराक्रम
देखकर अंग्रेजों की सेना आतं होकर हृषियार डालकर हाहाकार करने
लगी ।

इत्यं प्रयत्नेरपि ते पिशाचा दुरस्ततत्पौरुषसागरस्य ।

अलब्धपारा नितरामनाथाः कर्तव्यमूढा अबला इवासन् ॥१४८॥

शिवा-अन्वयः—इत्थम् प्रयत्नैः अपि ते पिशाचाः दुरस्त तत् पौरुष-
सागरस्य अलब्धपाराः नितराम् अनाथाः कर्तव्यमूढाः अबलाः इव आसन् ।

भावार्थः—इस प्रकार बहुत प्रयत्न से भी पिशाच अंग्रेज सैनिक
श्री चन्द्रशेखर के अनन्त बल सामग्र की थाह न पाकर अनाथ कर्तव्यमूढ
नारियों की भाँति हो गये ।

विषक्षभावे सुचिरं स्थिते च भृंशं रिपुणां कदने प्रसवते ।

सूर्योऽपि तत्प्रेरितचित्तवृत्तिः साध्यं रणं दैत्यगणैर्घर्षत् ॥१४९॥

शिवा-अन्वयः—अन्वयः सुगमः ।

भावार्थः—विषक्ष भाव में बहुत देरतक स्थित एवं जनुओं के विनाश
में लगे हुए श्री चन्द्रशेखर से प्रेरणा पाकर सूर्यनारायण भी देवतों के साथ
सायंकालीन युद्ध करने लगे ।

एवं विधाय कदनं कलुषात्मकानाम्,
निर्मध्य गौरजलधि सुभटः प्रदोषे ।

लीलां समाप्य सगुणां निजरोद्भावम्,
त्यक्त्वा शशाम शिववत् प्रलयावसाने ॥१५०॥

शिवा-अन्वयः—एवम् सः सुभटः कलुषात्मकानाम् कदनम् विधाय
गौरजलधिम् निर्मध्य प्रदोषे सगुणाम् लीलाम् समाप्य निजरोद्भावम्
त्यक्त्वा प्रलयावसाने शिववत् शशाम् ।

भावार्थः—इस प्रकार पाणियों का वध करके अंग्रेज महासमुद्र को
मथकर सुभट शिरोमणि श्री चन्द्रशेखर संडिया के समय अपनी सगुणलीला
को समाप्त कर रुद्रभाव को विसर्जित करके प्रलय के अन्त में भगवान
शंकर की भाँति अंग्रेजों को समाप्त कर अपनी ही गोली से समाप्त हो
गये ।

पञ्चत्वमागमदमुद्धय च पञ्चभूतम्,
आत्मा शिवं परं निष्कलतत्वरूपम् ।

संजीव्य भारतभवंस्वयशोऽमृतेन,
श्रीचन्द्रशेखरतनुस्तनुतामगच्छत् ॥१५१॥

शिवा-अन्वयः—अमूर्य पञ्चभूतम् पञ्चत्वम् आगमत् च आत्मा
निष्कलतत्वरूपम् शिवम् स्वयशोऽमृतेन भारतभूवम् संजीव्य श्रीचन्द्र-
शेखर तनुः तमूताम् अगच्छत् ।

भावार्थः—उनका पञ्चभूत पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश पञ्च-
भूतों में मिल गया । उनकी आत्मा निर्मल तत्वरूप शिव को प्राप्त हो
गयी । अपनी कीर्ति सुधा से भारत भूमि को संजीवनी देकर श्री चन्द्रशेखर
का शरीर सूक्ष्म हो गया ।

सुप्तां प्रबोध्य जनतां परिपोष्य धर्मम्,
संस्थाप्य भारतमहीं प्रथितप्रतिष्ठाम् ।

स्वाधीनतंकरसिकः कुटिलान्निहत्य,
आजाद इत्यभिधया भुवि शाश्वतोऽमूल ॥१५२॥

शिवा-अन्वयः—सुप्ताम् जनताम् प्रबोध्य धर्मम् परिपोष्य प्रथित-
प्रतिष्ठाम् भारतमहीम् संस्थाप्य कुटिलान् निहत्य स्वाधीनतंकरसिकः
भुवि आजाद इत्यभिधया शाश्वतः अमूल ।

भावार्थः—सोई हुई जनता को जगाकर धर्म का पोषण कर
भारत भूमि की प्रतिष्ठा स्थापित कर कुटिलों को मारकर स्वतन्त्रता
के अद्वितीय रसिक श्री चन्द्रशेखर आजाद नाम से पृथ्वी पर अमर हो
गये ।

यद्यप्यनेक सुभटा भुवि सम्बभूवः,
कान्तिप्रियाश्च जनतार्तिनिवारकाश्च ।

मग्नाः समेऽपि हि भवन्ति चरित्रमूर्तिः,
श्रीचन्द्रशेखर पदे मम निश्चयोऽयम् ॥१५३॥

शिवा-अन्वयः—यद्यपि भुवि कान्तिप्रियाः च जनतार्तिनिवारकाः

अनेक सुभटा: सम्बूद्धः तथापि समे अपि चरित्रमूर्तिः श्री चन्द्रशेखर गदे
मग्नाः भवति अयम् निश्चयः ।

भावार्थ— अब 'आजादचन्द्रशेखर' काव्य के प्रणेता कविवर आचार्यश्री अपना निश्चय कहते हैं—

यद्यपि पृथ्वी पर कान्तिकारी और जनता के दुखहर्ता अनेक सुभट उत्पन्न हुए किन्तु ये सब चरित्रमूर्ति श्रीचन्द्रशेखर के व्यक्तित्व में मग्न हो जाते हैं । ऐसा मेरा निश्चय है ।

इत्थं श्रीगुरुपादपद्मरजसामीष्टप्रसादा दहम्,
कृत्वा पावन चन्द्रशेखरगुणां काव्यसूजं सादरम् ।

तस्मै निर्गुणलिपिणे गिरिधरो गंगाधरायार्पये,
घृत्ता मे शिवमस्वया सह सदा तुष्टोऽनया शङ्कुः ॥१५४॥

शिवा-अन्वयः——इत्थन् अहम् गिरिधरः श्रीगुरुपादपद्मरजसाम् ईपत् प्रसादात् पावन चन्द्रशेखरगुणाम् काव्यसूजम् कृत्वा तस्मै निर्गुणलिपिणे गंगाधराय अर्पये अनया तुष्टः अम्बया सह शंकरः मे सदा शिवम् घृत्ताम् ।

भावार्थ——इस प्रकार मैं गिरिधर मिश्र अपने श्री गुरुजनों के चरण कमल के थोड़े से प्रसाद से चन्द्रशेखर आजाद के गुणों से युक्त इस काव्य मालिका की रचना करके गुणातीत रूप उन भगवान् शिवको अर्पण करता हूँ ।

इस कृत्य से सन्तुष्ट हुए अम्बा पार्वती के सहित भगवान् शंकर मेरा निरन्तर कल्याण करें ।

सत्यं राजतु मानसेषु च नृणां राज्यं प्रजारञ्जनम्,
भूयाद् भारतमिन्दुशेखरसमैर्वारैः पुनर्भाजिताम् ।
भूमिः शस्ययुतास्तु भातु सततं वाणी द्विजानाम् मुखे,
रामोऽस्मान् नवनीलनीरदनिभः श्रीमन्मुकुन्दोऽवतु ॥१५५॥

शिवा-अन्वयः——नृणाम् मानसेषु सत्यम् राजतु च राज्यप्रजारञ्जनम् इन्दुशेखरसमैर्वारैः भारतम् पुनः भ्राजताम् भूमिः शस्ययुता अस्तु द्विजानाम् मुखे वाणी सततम् भातु नवनीलनीरदनिभः श्रीमन्मुकुन्दः रामः अवतु ।

भावार्थ——धर्म प्रत्युत काव्य का उगाहार करते हुए आचार्यश्री गैरलकामना कर रहे हैं—

मनस्यों के चित्त में सत्य सुखोभित हो, राज्य प्रजा को आनन्द दे । भारतवर्ष श्री चन्द्रशेखर जैसे वीरों से किर सुखोभित हो, भूमि शस्य-पालिनी बने, द्राह्यणों के मुख में सरस्वती नित्य ही, विराजी रहें एवं नवीन नीलमेष के समान सुन्दर सीतापति मुकुन्द श्रीराम हमारी निरन्तर रक्षा करें ।

चन्द्रशेखरकाव्येऽस्मिन् चन्द्रशेखरसम्मिते ।

शिवां दीकां इमां गीतां राघवः समचोकरत् ॥

श्रीराघवः शन्तनोतु ।

इति सर्वाम्नाय श्रीतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य
स्वामिरामभ्राताचार्यविरचिते आजाद चन्द्रशेखरचरिते
उत्तरार्थः समाप्तः । सम्पूर्णं चंतकाव्यम्

॥ श्रीमद्राघवो विजयते ॥

आजादचन्द्रशेखरचरितम्

(खण्डकाव्यम्)

प्रणेता
सर्वाम्नाय श्रीतुलसीपीठाधीश्वर श्रीमञ्जगद्गुरु रामानन्दाचार्य
स्वामी रामभ्राताचार्यः

सुश्रीगीतादेव्या विरचितया
शिवाद्यया हिन्दीव्याख्यया विलसितम्

श्रीराघव साहित्य प्रकाशन निधि:
वसिष्ठाथनम् रानी गली, भूपतवाला, हरिहार (उ० प्र०)

● प्रकाशक :

श्रीराघव साहित्य प्रकाशन निधि :
वसिष्ठायनम्, रानी गली
भूपतवाला, हरिद्वार (उ० प्र०)

सर्वाधिकारा: प्रकाशकाधीना:

● प्रथम संस्करणम्

श्रीगीताजयन्ती
मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी
विक्रमाब्द: २०५३ (१६६६)

● सहयोग राजि—३१-०० रूप्यकाणि
(एकत्रिशद्रूप्यकाणि)

● मुद्रक :

साहित्य सेवा प्रेस
१५६ छीपी टैक,
मेरठ (उ० प्र०)

प्राङ्गनिवेदनम्

क्षपित कुदोषकलङ्का हतमलपङ्का गुणनिरातङ्का ।
विलसित रसहरिणङ्का काचिद् दाणी कवेजंयति ॥

कविता खलु मानवस्य निर्दोषमनो दर्पणम् वस्मिन् तस्य सूक्ष्म-
जीवनवृत्तं सेतिवृत्तं परिणम्यते । काव्यरचनाशक्तिः न कञ्चित् हेतुम्-
पेक्षते एषा भगवदीयप्रतिभापुरस्कारा । वाल्यकालादेव भारतीय संस्कृतेः
परमोपासकेभ्यः श्री सूर्यवली मिश्र नामधेयेभ्यः अस्मत् पितामहचरणेभ्यः
कृतस्तं रामचरितमानस समधीत्य कण्ठस्थीकृतम् । तदारभ्य भम मानसे
काव्यकला प्रति स्वाभाविकोऽनुरागः समजनि । संस्कृताध्ययनात् प्राक्
मया हिन्द्यां 'दोणवधकाव्यम्' व्यरचि किन्तु तदानीन्तन जीवनस्य अव्य-
वस्थित्वात् साम्प्रतम् तस्य पाण्डुलिपिर्नैपलभ्यते । प्रथमायामेव पठन्
अहं सामान्यविशेषाः संस्कृतश्लोकरचनाः करोमि स्म । यदा पुनर्वाराण-
सोम् अगच्छम् तदानीन्तन वाराणसेयसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य साहित्य
विभागाध्यक्षचर्चरैः पण्डितश्रीद्विजेन्द्रनाथ मिश्र 'निर्गुण' महाभागीः सम्प्रे-
रितोऽहम् आचार्यद्वितीयवर्णीयच्छाव्रातः सन् आजादचन्द्रशेखरमुद्दिष्य लघुकायं
खण्डकाव्यमेतद् व्यरीरचम् स्वभावो मे क्रान्तिकारी अतो हेतो अत्र बहुनि
उपादानानि संकलितानि पूर्वार्थोत्तरार्थभागाभ्यां काव्यमेतत् प्रस्तुतम् ।

इह काव्ये निसर्गेतः काव्योचिता ये चालङ्काराः समागताः ते तूनं
सहृदयहृदयवेद्याः । छन्दःसु वंशस्थवसन्ततिलकोपजातीन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्ञा-
तुष्टुव् द्रुतविलम्बितगिखरिणीवियोगिनीपञ्चामरत्रोटकशाद् लविक्री-
डितानि । यद्यपि अद्यतः चयोविशितवर्षपूर्वम् इतो भिन्ना परिस्थिति-
रासीत् सर्वथा, साम्प्रतं ततोऽप्यधिककरालतां गतोऽप्यम् सकलविकलनः
कलिः । परं काव्येऽस्मिन् भगवतः श्रीरामस्य कृपया यान्युपादानानि
निसर्गंतो मया निहितानि तानि साम्प्रतमपि प्रासङ्गिकानि भविष्यत्यप्यनेहसि
समुपयोगीनि सेत्यस्तीति निरत्ययो मे प्रत्ययः ।

विद्या विजीवनं खलु कस्यापि सामान्यमेव भवतीति सार्वजनीनः
समयः तत्रापि संस्कृतविद्यार्थिनाम् तत्रापि मम येन शरीरयात्रापि निवौद्धु
कृच्छ्रमनुभूयते स्म । अक्षिवैकल्यकलितविडम्बनया जनानां नितरामु-
पेक्षया प्रतिपदं पिवन्तपि कालकूटं निजाध्यारिमिकणक्त्वा सत्रोनपि विद्यान्
विगणाद्य सुधामेव चन्द्रशेखरकाव्यात्मना समुदगिरम् । कवचित् कवचित्
काव्येऽस्मिन् स्वकीयाः कट्वोमध्याश्चानुभवाः समुपजूभिताः । क्रान्ति-
नीम असद्विचारविशेषवृत्तिर्न तु प्रतिर्हिसा । सा महा वाल्यकाला-
देव राचते । परिवारे विश्वविद्यालये पूर्वायमवान्धवेष, मित्रेण तुरीयाश्वर्गे न
साम्प्रतमपि सर्वंत्र पक्षेन द्रुत्स्यजोऽयं स्वभावो मामकीनः शरीरगम्य गां न

जहाति । एतदगुणगण विशिष्टत्वादेव समानशीलत्वात् आजाद चन्द्रशेषरु काव्य यास्यनायको निश्चितः । रामो राष्ट्रान्तं पृथक् राष्ट्रव्यं रामानं पृथक् इति मत्खेत् मया सततं श्रीरामकथास्वपि राष्ट्रवादः समुपजृमितः । राष्ट्रव्ययारामकथयोः समन्वय एव ममविचारसरणिकेन्द्रविन्दुः

रामो राष्ट्रस्य सर्वस्वं रामो राष्ट्रस्य वैवतम् ।

रामो राष्ट्रपिता ज्येष्ठो रामो राष्ट्रस्य भङ्गलम् ॥

अथमेवास्ति मम चिन्तनाधारः । अतः काव्यमेतत् राष्ट्रभक्त्या सह श्रीरामभक्तिमङ्गीकृत्यैव प्रवहति । काव्येऽस्मिन् मया भूतार्थमेव प्रकाशयितुम् प्रयतितम् क्वाप्यतिरक्षजनालोभात् ऐतिहासिकतथ्यानि न तिरोहितानि । आजादचन्द्रशेषरेण सह चिरं स्थितवतः श्रीमन्मथनाथ-गुप्तस्य लेखमेव एतत् काव्यकथावस्तूपजीव्यत्वेन समङ्गीकृतवानहम् तदानीन्तन विडम्बनातो द्रविडपाश्यर्थच्च सामाजिक सहानुभूतेरभावादपि जीवनान्तिराजेन मया एतत् काव्य प्रकाशनार्थं कानिचिद् वर्षोणि यावन्न-प्रयतितम् । भगवत् कृपया कथित्वदेतत् काव्यपाण्डुलिपिः सुरक्षिता । अनन्तरं समाप्तं मम जीवने मधुमयं प्रभातं ततो जिजीवियापदमाद-धार्मामकीने विस्मृतपुरुषार्थे कुण्ठाग्रस्ते मानसे । ततो मम परमसहयोगिभू-ताभिः ज्येष्ठभगिनीत्वं गताभिः सुश्री गीतादेवी नाम्नीभिः युष्माकं 'बुधाजी' महाभागाभिः हिन्द्यां एतत् काव्यस्य शिवाभिधानां दीक्षा लिखित्वा ममोत्साहः संवर्धितः ।

परमपावने श्री गीताजयन्यवसरे एतत् काव्यप्रकाशनार्थं भगवत्वं श्रीरामचन्द्रेण प्रेरितोऽहम् एतत् काव्यकुमुरं भारतवासि जनता जनार्दनाय समर्पयन् मोदमावहामि ।

गृहाण काव्यकुमुरं चन्द्रशेषरमद्भूतम् ।

प्रसीद भारते वर्वे जय जनता जनार्दनः ॥

आशासे यदनेन काव्यपुष्पेण भारतस्य साम्प्रतिका भाविनश्च राजनेतारो भवेयुः शुद्धमानसाः अष्टाचाररहिताः आजाद चन्द्रशेषर-चरिताद ग्रहीतशिकाः । एतत् काव्यमुद्रणे धनसहयोगं कृतवान् असमद्-विद्येयः गाजियादादस्थ श्रीमन्मोहन गोयलः तस्मै सपरिवाराय शुभाशिष्यो वितरामि । शुभाशीराशीश्च प्रादिशामि कामं मदनन्वाभ्यां श्री दिवाकर शर्मं, सुरेन्द्र शर्मं सुशीलमहाभागाभ्यां ययो दिवानिशं विहित-भूरिपरिप्रमेण ग्रन्थोऽयं लघ्वकलेवरो जनसाजनार्दनं रज्जविष्यतीति । अनन्तरं आयुष्मतो दिनेश प्रभात गौतमयोरपि सेवां स्मरन् मङ्गलाशासनं व्याहरामि ।

स्मरन्तो राघवं सर्वे रामं राष्ट्रैकविग्रहम् ।

चन्द्रशेषरमन्वीयुः सदा भारतवासिनः ।

इतिमङ्गलमाशास्ते

राघवीयो जगद्गुरु रामानन्दाचार्यः स्वामी रामभद्राचार्यः ।



प्रणेतुर्जीवनजाहनवी

शाणिखुर्दीहृये ग्रामे जातं जीनपुराभिधे ।

मण्डले हयुत्तरप्रान्ते भारतस्यार्थसत्तमम् ॥१॥

माघे शुक्ल एकादश्यां मकरं भास्करे गते ।

यं शाची शुपुवे देवी राजदेवात् द्विजोत्तमात् ॥२॥

द्विसहस्राधिके पष्ठे वैक्रमेऽब्द उहकमे ।

घृतस्नेहकमं लब्धवा मुमुदे ब्राह्मणान्वयः ॥३॥

गीर्वाणभारतीभूति विभूति परमात्मनः ।

नाम्ना गिरिधरं पूर्वश्चमे मिश्रोपनामकम् ॥४॥

विज्ञं वशिष्ठगोत्रीयं थोत्रियं श्रुतधारिणम् ।

वित्रं सरयुपारीणमखण्डवृद्धचारिणम् ॥

सम्प्रत्यच्युतगोत्रीयं चित्रकूटविहारिणम् ।

तुलसीपीठकर्तरं रामानन्दपदे स्थितम् ॥५॥

धर्मवर्णाश्रमामनाय गोरक्षाद्रतधारिणम् ।

अखण्डं भारतं भूयो दृष्टुकामं दयामयम् ॥६॥

मर्यादारक्षकं लोक वेदानां भवतभूपणम् ।

शिक्षकं मूढचित्तानां निरस्ताशेषदूषणम् ॥७॥

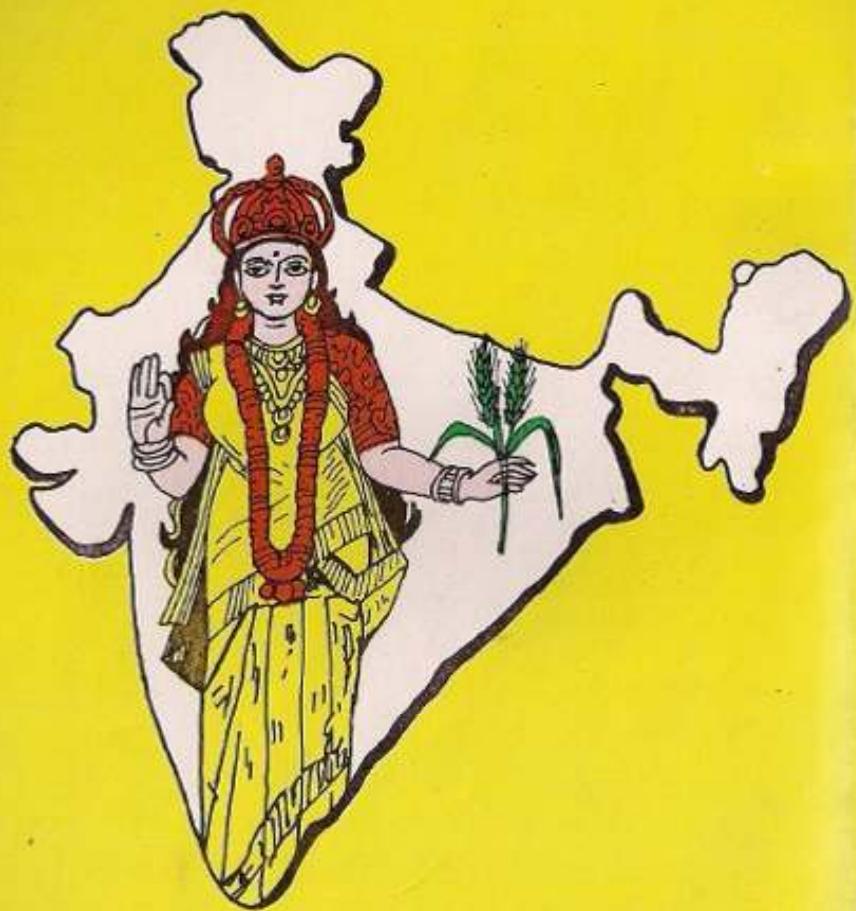
परीक्षासु सदोत्तीर्णं प्रथमं प्रथमादिषु ।

विश्वविद्यालयीयासु प्रथमस्थानिकं सदा ॥८॥

लब्धहैमपदकं प्रतिष्ठितं पण्डितस्य पदवीविभूषितम् ।
 वादिभीकरमहंस्वसद्गुरुं चिनतये हृदि सदा जगद्गुरुम् ॥६॥
 राघवस्य शिशोः साक्षादाचार्यवे प्रतिष्ठितम् ।
 सखायं कृष्णचन्द्रस्य स्तुवे तद्भावभावितम् ॥१०॥
 कलि विलोक्यानवलोक्यमत्यजद्,
 दृशोः मुखं शैशवकालं एव यः ।
 तमग्रगण्यं विदुषां स्वसद्गुरुं,
 स्मरामि रामार्पितमानसं सदा ॥११॥
 प्रज्ञाचक्षुपमज्ञानध्वन्तध्वंसनमास्करम् ।
 रामानन्दमहं वन्दे रामभद्रारुद्यमच्युतम् ॥१२॥
 वाल्ये हि बालरवुनाथमना मनस्ती,
 श्रीमतिपतामहमुखाद् धृतमानसो यः ।
 गीतावचांसि धृतवान् सकलानि कण्ठे,
 वर्षेऽष्टमे गिरिधरारुद्यगुरुं स्तुवे तम् ॥१३॥
 श्रुत्वा सकृत्कलितवान् कलिदोषमुक्तः,
 शास्त्राणि यस्तु सकलानि कलावतारः ।
 अन्तदृशं गुरुवरं सदृशं हरेस्तम्,
 वन्दे सदा गिरिधरं हृदि भक्तिमन्तम् ॥१४॥
 जातो हरेगिरिधरस्य कलाविशेषो,
 नाम्ना कृतो गिरिधरो गुरुभिः पुरा यः ।
 श्रीरामनामरससागरमन्तेतो,
 मीनं स्तुवे गुरुवरं तमहं कृपालुम् ॥१५॥
 आचार्यं रामभद्राय नमोऽन्तदिव्यचक्षुदे ।
 ज्योतिर्धराय दान्ताय प्रशान्ताय नमो नमः ॥१६॥
 नमो विद्ववरेष्याय शरण्याय महात्मने ।
 रामानन्दावताराय कृष्णचन्द्रसखाय च ॥१७॥
 कण्ठाग्रेकृतनिःशेषशास्त्रवसाराय धीमते ।
 पास्त्रार्थिनां धुरीणाय नमो वामीशरुपिणे ॥१८॥
 श्रुतमात्रावेद्याय सकृत्संश्रुतधारिणे ।
 नमः स्वल्पपयःपाने विलष्टानुष्ठानकारिणे ॥१९॥
 तेजःपुञ्जमयास्याय दास्यवात्सल्यभाविने ।
 मेधाविने नमस्तस्मै ह्यप्रमेयप्रभाविणे ॥२०॥

रामायणार्थोत्थाय निर्मलाय कलामृते ।
 दाशरथे कथामाथासुधासंसाविने नमः ॥२१॥
 नमोऽकुद्धाय बुद्धाय गुद्धायासद्विरोधिने ।
 संनिश्चमनोबुद्धिवृत्तये विजितात्मने ॥२२॥
 विप्रवंशावतंसाय संसारत्रासहारिणे ।
 नमः परमहंसाय योगिने ब्रह्मचारिणे ॥२३॥
 गुहं मानसमंज्ञं गीतातत्वार्थकोविदम् ।
 श्रीमद्भागवतव्याख्यात्राग्रगण्यमहं स्तुवे ॥२४॥
 हृदि गुरुवरपादपद्ममनिश्चमहं कलये कलेमंलधनम् ।
 गुरुवरचरणाब्जचक्षुरीको यदि न भवामि गतं वृथा ममायुः ॥२५॥

परिच्छायकः स्तोता विनीतशिष्यः
 स्नेही हरिदासो 'वृन्दावनीयः'



मुद्रक : साहित्य सेवा प्रेस, मेरठ